# मकड़ी का जाला

रामप्रकाश सक्सेना

दिनमान प्रकाशन, दिल्ली-110006

पद्मश्री डॉ० श्यामसिंह शशि
को
सादर

# पुरोवाक्

जीवन की विद्रूपताओ और सामाजिक विडंबनाएं ही व्यंग्य का लक्ष्य होती हैं। व्यग्य के माध्यम से विकृति को कुरेदा जाता है; साथ ही, सार्वजनीन जीवन के हित की संभावनाओ को उकेरा भी जाता है। स्वतन्त्रता के पश्चात् जीवन के हर क्षेत्र में—सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, शैक्षिक, आदि—असगतियो का तीव्र गति से विकास हुआ है। व्यवस्था का उच्चादर्श नैतिक पतन के कारण टूटा और बिखरा है। भारतीय जनमानस मे तटस्थता का भाव पसरता जा रहा है, जिससे चरित्र हर स्तर पर लाछित हुआ है और टूटा है। मूल्यो के अधोपतन की स्थिति मे मेरा व्यंग्यकार आहत नही हुआ—ऐसा नही है। उसने वेदना से विकृतियो को खोजा है, कुरेदा है। मैंने प्रयत्न किया है कि मैं विकृतियो की हद तक जाऊं। इसलिए विडंबनाओ की एक-एक परत को प्याज के छिलकों की तरह उतारता गया हूं। यह मेरा यथार्थ के अतिम छोर तक पहुचने का प्रयास रहा है।

'मकडी का जाला' मेरा प्रथम व्यग्य संग्रह है। मकडी का जाला एक प्रतीक है, जो हमारी व्यवस्था मे लगा है। इसको कौन हटाए—मैं, आप या वह। बस, इसी ऊहापोह मे फंसा है एक आम आदमी। इस संग्रह मे व्यथित व्यक्ति की वेदना का जहां एक ओर साक्षात्कार है, तो दूसरी ओर सामाजिक जीवन और व्यवस्था के स्तरो पर पलने और बढ़ने वाले भ्रष्टाचार को मैंने बिना किसी लाग-लपेट के रखने का प्रयत्न किया है। आदमी के जीवन मे आहत होते क्षणो को मैंने भी भोगा है। यही कारण है कि इसमे अनुभूति का यथार्थ अधिक अर्थवत्ता के साथ जुड़ गया है।

रचनात्मक साहित्य मे मेरा प्रवेश कहानी के माध्यम से जुड़ा हुआ है।

अधिकतर व्यग्यो मे एक कथानक है, जो पाठक को निबंध के साथ कहानी का भी आनद दे सकेगा, ऐसा मेरा विश्वास है।

मेरे ये व्यग्य साप्ताहिक हिंदुस्तान, धर्मयुग, मंगलदीप, बालभारती, लोकमत समाचार, युगधर्म, राष्ट्रदूत, नवभारत, अमृत सदेश आदि के दीपावली या अन्य विशेषाको मे प्रकाशित हो चुके है। कुछ का प्रसारण आकाशवाणी से भी हुआ है। साथ ही, कई रचनाओ का नाट्य रूपातरण भी हो चुका है। कमानी प्रेक्षागृह, नई दिल्ली; रवींद्र भवन, भोपाल, बूटी हॉल, नागपुर तथा तोक्यो (जापान) मे स्थिति एशिया अफ्रीका विद्यापीठ के प्रेक्षागृह मे उनका मचित और प्रशंसित होना सुधी दर्शको की कृपा मानता हू। हिंदी के पाठकों के निकट मुझे लोकप्रियता मिली है, वही मराठी व उर्दू पाठको के बीच इन व्यग्यों के अनुवाद समादृत हुए हैं।

वरिष्ठ व्यंग्य लेखक आदरणीय श्री हरिशकर जी परसाई ने इस सग्रह के व्यग्यो को पढ़कर आशीर्वाद दिया, उन्हे मैं किस मुह से आभार दूं, अतः मौन रहकर विनत हू।

व्यग्य निबधों को लिखने व अतिम रूप देने मे जीवन सगिनी डॉ० साधना सक्सेना की टोका-टाकी व सुझाव के लिए उनका ऋण शब्दो मे चुकाना उनके साथ अन्याय ही होगा। मेरे साहित्यकार मित्र श्री रज्जन त्रिवेदी व प्राध्यापिका किरण झाव के सहयोग के लिए मैं उनका आभारी हू।

लेखक महाराष्ट्र राज्य हिंदी साहित्य अकादमी तथा प्रकाशक श्री अनिल कुमार का भी कृतज्ञ है, जिनके कारण यह सग्रह पाठक के सामने आ सका।

असली निर्णायक तो पाठक ही हैं। अतः यह संग्रह उनके निकष के लिए प्रस्तुत है।

ए-12, एच० आई० जी०
हाउसिंग बोर्ड कालोनी,
त्रिमूर्तिनगर, नागपुर-22

राम प्रकाश सक्सेना

# अनुक्रम

# मकड़ी का जाला

मेडिकल कालेज के वार्ड नं० 3 के बेड नं० 28 के मरीज ने नर्स से कहा कि उसके बेड पर जो रॉड लगा है, उस पर मकडी का जाला लटक रहा है। उसे हटा दीजिए। नर्स ने उत्तर दिया कि बेड की सफाई की जिम्मेदारी मेरी है। मकडी के जाले को हटाने का काम स्वीपर का है। जब वह आए, तब उससे कहिए।

यह मरीज कोई और नही, दुर्भाग्य से स्वयं लेखक ही था, जिसे सर्वाइकल स्पॉन्डिलाइटिस के कारण चौबीसों घण्टो के ट्रेक्शन मे रखा गया था। इसमे हिलने-डुलने की सख्त मनाही थी। बेबसी की इस हालत मे मैं इन्तजार करने लगा कि कब स्वीपर आये। दो-तीन घंटो के बाद एक खुश-नुमा नौजवान हाथ मे झाड़ू लिये रूम मे आया। मैंने उससे कहा, "स्वीपर जी। जरा मकडी का जाला हटा दो।"

उस नौजवान ने बिगड़ते हुए कहा, "मैं स्वीपर नही, फर्राश हू। मेरा काम फर्श की सफाई करना है। अगर फर्श पर जाला हो, तो साफ कर दूं।"

अब मैं स्वीपर के आगमन की प्रतीक्षा उसी आतुरता से करने लगा, जिस प्रकार एक प्रेमी अपनी प्रेमिका का करता है। आधे घण्टे के बाद एक व्यक्ति आया, जो स्वीपर जैसा लग रहा था। मैंने उसे स्वीपर कहकर सबोधित किया। उसने नाराज होकर कहा, "मैं क्या तुम्हें स्वीपर दिखाई देता हूं ? मैं तो यहां का अटेंडेंट हू।"

मैंने झट माफी माग ली। मैं इतना डर गया कि उधर आते-जाते किसी भी व्यक्ति से मैंने स्वीपर का नाम नही लिया। थोड़ी देर के बाद

एक व्यक्ति मेरे पास आया और कहने लगा, "मैं यहां का स्वीपर हूं। आपसे पहले इस बेड पर जो साहब थे, वे बहुत भले आदमी थे। जाते समय इनाम मे पाच रुपये दे गये थे। मेरे लायक कोई सेवा हो, तो बता देना।" मैंने पिछले अनुभवो के आधार पर सहमते हुए कहा, "भैया! जरा इस मकड़ी के जाले को साफ कर दो।"

स्वीपर ने गुस्याई आवाज में कहा, "मेरा काम मकड़ी का जाला साफ करना नही।" मैं फिर घबड़ा गया। स्वीपर जाते-जाते मेरे ऊपर दया करते हुए यह सलाह दे गया, "थोड़ी देर में बड़ी सिस्टर राउंड पर आयेंगी। वह ही वार्ड की ओवरऑल इन्चार्ज हैं। आप उनसे कहना!"

शिकायत के इसी क्रम में सारा दिन निकल गया। पर कही कोई आसार नजर नही आ रहा था। शाम होने लगी। रात आ गई, पर जाला छुटाने कोई न आया।

दूसरे दिन भी कुछ न हुआ। इत्तिफाक से उसी दिन शाम को मेरे एक पत्रकार मित्र मुझसे मिलने आये। मैंने उनको यह सब हाल बताया। इसके दूसरे दिन शहर के लगभग सभी दैनिक पत्रों मे यह खबर छपी। एक अखबार ने तो सम्पादकीय ही छाप डाला। उसमे उन्होने लिखा, "हमारे प्रजातन्त्र की नौकरशाही में मकड़ी का जाला लग गया है।"

उक्त समाचार पूरे मेडिकल कॉलेज में फैल गया। फलस्वरूप सुपरिटेंडेंट को एक इमरजेंसी मीटिंग बुलानी पड़ी, जिसमें इस प्रश्न पर गम्भीरता से विचार किया गया। जब सुपरिटेंडेंट ने वार्ड न० 3 के हाउस-सर्जन को जिम्मेदार ठहराना चाहा, तब उसने सफाई में कहा, "सर, यह बेड हमारे यूनिट का नहीं है।"

इस बात पर मीटिंग मे तू-तू मैं-मैं हो गई। अतः यह सभा शीघ्र ही समाप्त करनी पड़ी। चूंकि यह राजधानी का मेडिकल कालेज था, इसलिए यह सम्पूर्ण राज्य मे चर्चा का विषय बन गया। एक विरोधी पक्ष के सदस्य ने इसका फायदा उठाया। उसने विधानसभा मे इस घटना पर स्वास्थ्य मन्त्री से वक्तव्य देने को कहा। मन्त्री महोदय ने बताया कि वे शीघ्र ही मेडिकल कॉलेज का दौरा करेंगे और इस सम्बन्ध मे अपना वक्तव्य देंगे।

समाचार-पत्रो मे जब यह खबर छपी, तब सुपरिटेंडेंट महोदय को पुनः

इस घटना पर विचार करने के लिए मीटिंग बुलानी पड़ी। मीटिंग में सुपरिटेंडेंट ने इस विजय पर अपनी चिन्ता व्यक्त की और लोगो से सुझाव मांगे। काफी विचार-विमर्श के बाद भी जब कोई नतीजा नजर नहीं आया, तब सुपरिटेंडेंट महोदय ने खीज कर कहा, "मकडी का जाला मैं ही हटा दूंगा।"

इस बात पर सुपरिटेंडेंट के एक चमचे को बहुत बुरा लगा और उसने कहा, "सर आप चिन्ता न करें, मकड़ी का जाला मैं हटा दूगा।" इस कथन पर एक नर्स ने, जिसका रिकार्ड बहुत खराब था और जिसका प्रमोशन ड्यू था, यह सोचा कि ऐसा अवसर अपने हाथ से नही जाने देना चाहिए। ऐसा विचार मन में आते ही उस नर्स ने मधुर स्वर मे घोषणा की, "आप डॉक्टरों को यह शोभा नही देता। इस कार्य को करने के लिए आप मुझे अवसर दीजिए। यदि आप आज्ञा दें, तो मैं अभी यह कार्य करके आती हूं।"

एक जूनियर डॉक्टर ने, जो उस सुन्दर नर्स पर मरता था, सोचा कि क्यों न इस अवसर का लाभ उठाया जाये। अतः उसने सुपरिटेंडेंट से कहा, "सर, आप इनको तकलीफ मत दीजिए। यह काम मैं कर दूगा।" सुपरिटेंडेंट उस जूनियर डॉक्टर के मन की बात को भांप गया, इसलिए उसने इस विचार से कि यहां डॉक्टर की दाल न गलने दी जाए, यह निर्णय लिया— "क्योंकि इस काम को करने की पहल सिस्टर निर्मल ने की है, अतः यह अवसर उन्ही को प्रदान किया जाये।" सुपरिटेंडेंट का अन्तिम वाक्य समाप्त होते ही नर्स मीटिंग से उठ ली और वार्ड नं० 3 की ओर चल दी। यह दृश्य देखकर लोग हक्के-बक्के रह गये और नर्स के पीछे चल दिये।"

जब यह मीटिंग चल रही थी, उसी समय वार्ड नं० 3 के बेड नं० 28 के मरीज यानी मुझको मकडी का जाला हटाने की एक नई योजना सूझी। मैंने फर्राश से कहा, "मकडी का जाला कई दिनों से लगा है। मैं तुम्हे दो रुपये दूगा। तुम्ही हटा दो।"

इतना सुनते ही फर्राश की बाछें खिल गईं। उसने जैसे ही मकड़ी का जाला हटाने के लिए हाथ बढ़ाया, पीछे से स्वीपर ने, जो दो रुपये की बात

सुन चुका था, फराँश को धक्का दिया और बोला, "साले, दो रुपये का लालच करता है। चल हट, यह काम मैं अकेला कर देता हूं।" इस बात पर दोनो मे गुत्थम-गुत्था हो गई। इसका लाभ उठाते हुए पास मे खड़े अटेंडेंट ने मरीज से कहा, "साहब ! ये दोनो साले बदमाश है। आप मुझे एक रुपया दे देना।" इतना कहकर उसने जाला छुटा दिया।

वार्ड मे जब यह हगामा हो रहा था, तभी वहा नर्स, सुपरिंटेंडेंट व अन्य डॉक्टरो ने प्रवेश किया। सुपरिंटेंडेंट ने समझा-बुझा कर इस हंगामे को शात किया।

वार्ड मे हुए गुत्थम-गुत्था जैसी अनियमितताओं के विरुद्ध कार्रवाई करने हेतु सुपरिंटेंडेंट ने पुनः मीटिंग बुलाई। जब यह मीटिंग चल रही थी, तभी सुपरिंटेंडेंट को स्वास्थ्य-मन्त्री के सचिव का फोन मिला। फोन पर सचिव ने बताया, "अभी-अभी मंत्री महोदय ने नगर के पत्रकारो के समक्ष यह घोषणा की है कि वह कल अस्पताल का दौरा करेंगे और इस गाधी सप्ताह मे सफाई-अभियान के अतर्गत मकड़ी का जाला वह स्वय साफ करेंगे। मन्त्री महोदय के साथ कुछ पत्रकार तथा फोटोग्राफर भी होगे। आप मकडी का जाला ज्यो का त्यों लगा रहने दीजिए। बाकी अस्पताल की अच्छी साफ-सफाई करा दीजिए। बीस-पच्चीस लोगों के नाश्ते-पानी का भी प्रबन्ध अस्पताल मे करा दीजिए।"

जब सुपरिंटेंडेंट ने सचिव का यह कथन मीटिंग मे सुनाया तब यह चिन्ता होने लगी कि मकडी का जाला तो पहले ही हटा दिया गया है, फिर मन्त्री महोदय क्या हटायेंगे ?

इस पर सुपरिंटेंडेंट के चमचे ने सुझाव दिया, "सर, आप चिन्ता क्यो करते है। अपने मेडिकल कालेज मे बहुत मकडी के जाले हैं। जिस अटेंडेंट ने मकड़ी का जाला हटाया है, उसे यह आदेश दिया जाये कि वह मकडी का जाला फिर उसी स्थान पर लगा दे।" इस सुझाव पर सभी ने एक मत से समर्थन किया। अटेंडेंट के द्वारा मकडी का जाला उसी स्थान पर पुनः लगा दिया गया।

रात भर मकडी का जाला अपने भाग्य को सराहता हुआ मन्त्री

महोदय के कर-कमलों का इन्तजार करता रहा और नासमझों का उपहास भी।

दूसरे दिन प्रातः मन्त्री महोदय के आगमन की सभी तैयारियां मेडिकल कॉलेज में कर ली गई। ऐन मौके पर सुपरिटेंडेंट साहब को मंत्री महोदय के सचिव द्वारा फोन पर यह सूचना मिली, "खेद है कि मन्त्री महोदय आज न आ सकेंगे। उनके चुनाव क्षेत्र में सूखा-ग्रस्त इलाके का दौरा करने हेलिकॉप्टर से मुख्यमन्त्री आ रहे हैं। अतः मन्त्री महोदय भी उनके साथ दौरे पर रहेंगे।"

मन्त्री महोदय के अगले दौरे का इन्तजार करता हुआ, मकड़ी का जाला जहां था, वहीं है।

# देसी कुत्ता और अल्सेशियन डॉग

एक देसी कुत्ता अपने गाव में बड़े मजे में रहता था। हर घर से एक न एक टुकड़ा मिल जाता, जिससे उसका पेट भर जाता। गाव वाले उसे प्यार से पिल्लू कहकर पुकारते और पिल्लू उनकी हर पुकार पर दुम हिलाता। रात को बिना बिजली के इस गाव में अजनबी तो कोई आता नही और वह अपने गांव वालो पर भौंकना उचित नही समझता, क्योंकि उसकी उदरपूर्ति मे सब घर वालों का हाथ रहता। अतः रात को प्रैक्टिस के लिए वह अपनी ही जाति के कुत्तों पर भौंक लेता।

अरसा बीत गया। उसकी यही स्थिति बनी रही। एक दिन चुनाव प्रचार के लिए एक नेता उस गाव मे आये और जन-जागृति लाए। जब नेता का भाषण हो रहा था, तब पिल्लू वही पड़ा-पड़ा भाषण सुनने लगा। भाषण रुचिकर था। बीच-बीच में चुटकुले थे। देश की, विशेषतया इस गांव की, पिछड़ी हालत पर उन्हें रंज था और उसके सुधार का उनकी वाणी में संकल्प था बशर्ते वे इस चुनाव-क्षेत्र से जीत जायें।

नेताजी ने बताया कि देश मे स्वतंत्रता आ गई है। अब सब लोग बराबर हैं। न कोई बड़ी जाति है और न कोई छोटी। एक युवक श्रोता ने टोका, "हुजूर, हमारे गांव मे यह सब-कुछ है।" नेता ने कहा, "यह इसलिए है कि आप अपढ़ है, जाहिल हैं। यदि हम चुनाव मे जीत गये तो आपको पढ़ायेंगे और आपको सुसंस्कृत बनायेंगे। गाव मे बिजली आयेगी, तरक्की होगी। होटल खुलेंगे, जहा सब जाति के लोग एक साथ बैठकर चाय पियेंगे। शहर मे जाति-पांति का बन्धन टूट चुका है। हम यह करिश्मा आपके गांव मे भी लायेंगे।"

नेता तो अपना भाषण देकर चले गये, पर उस पिल्लू पर इसका बड़ा क्रांतिकारी प्रभाव पड़ा। उसने सोचा कि इस गांव में रहते-रहते वर्षों बीत गए, कोई तरक्की नहीं हुई, क्यों न बाहर चला जाये। उसे याद आया कि रामू नाम का एक लड़का जो पहले इस गांव में घुटन्ना (अंडरवियर) पहन कर घूमता था, बाहर चला गया था। उसकी जिन्दगी बन गई। यहां आता है तो सूट में आता है, सिगरेट पीता है, जबकि गांव के सब लोग बीड़ी पीते हैं। शहर की बड़ी तारीफ करता है।

एक सुबह पिल्लू शहर की ओर चल दिया। घंटों चलने के बाद एक पक्की सड़क दिखाई दी। पिल्लू समझ गया कि अब शहर आ गया। उसने सड़क से लगे एक गड्ढे में स्नान किया और टिपटॉप होकर हृदय में सैकड़ों अरमान लेकर शहर मे प्रवेश किया। पहली इमारत को ही पिल्लू टकटकी लगाकर देखता रहा और उस बिल्डिंग के चारों ओर घूमने लगा। थोड़ी देर मे एक खूबसूरत अल्सेशियन कुत्ता, जो उस बिल्डिंग में रहता था, इस देसी कुत्ते को देखकर भौंकने लगा। पिल्लू, जिसके सिर पर अभी तक नेता के भाषण की खुमारी थी, सिड़कते हुए उस शहरी कुत्ते से बोला, "ए भाई, तुम अपने भाई पर ही भौंकते हो। मैं तो गांव से तुम्हारे शहर आया हूं। तुम्हें मेरा स्वागत करना चाहिए।"

शहरी कुत्ते ने घमंड से उत्तर दिया, "ए गंवार ! मैं तुम्हें अपने बराबर दीखता हूं। कहां राजा भोज, कहां गंगू तेली।"

देशी कुत्ता पिल्लू : "क्यों, तुम मे और हम मे क्या अन्तर है ? दोनों कुत्ते हैं।"

शहरी कुत्ता : ऐ कुत्ते, कुत्ता तू होगा, मैं तो डॉग हूं और वह भी उच्च जाति का, श्रेष्ठ कुल का अल्सेशियन डॉग। मेरे मालिक मुझे 'गोल्डी' कहकर पुकारते हैं।"

पिल्लू : "मेरे गाव में एक लड़का ज़ोर से अंग्रेजी पढ़ता था, तो वह चिल्लाता था—
डी० ओ०जी० डॉग, डॉग मानी कुत्ता।"

गोल्डी : "चुप, बेवकूफ, अरे पढ़ने तो लोग यह भी हैं : ब्रेड मानी रोटी। क्या रोटी ब्रेड का मुकाबला कर सकती है ? ब्रेड

डाइनिंग टेबल पर खाई जाती है और रोटी पटे पर बैठकर या जमीन पर बैठकर खाई जाती है। दोनों का क्या मुकाबला? अब समझे।"

पिल्लू : समझा तो कुछ नहीं। पर कह रहे हो तो मान लेता हूं। आखिर अपनी ही जाति के हो।

गोल्डी : फिर कहा अपनी ही जाति के। अरे भाई! हमारी-तुम्हारी जाति मे जमीन-आसमान का अन्तर है। अच्छा, यह बताओ तुम्हें अपने मां-बाप का पता है।

पिल्लू : नहीं तो।

गोल्डी : हां, हममें-तुममें यह दूसरा अन्तर है। हमे अपनी तीन पुश्तो का पता है। हमारे साहब बडे गर्व से बताते हैं। सन् सैंतालिस में जब अंग्रेज कलेक्टर अपने देश गया था, तो हमारे मालिक के दादा, जिनको अंग्रेजों ने स्वामिभक्ति के लिए और कांग्रेस के विरुद्ध कार्य करने के एवज मे राय-बहादुर का खिताब दिया था, को अपनी लूसी (कुतिया) दे गये थे, जो सेन्ट बर्नार्ड जाति की थी। लूसी के वंशज इग्लैंड के राजा के दरबार मे रहते थे। इस लूसी का क्रास अपने राज्य के मुख्यमन्त्री के कुत्ते, जो बुलडॉग जाति का था, से हुआ। उसकी एक संतान का क्रास बीगल से हुआ। उसकी एक संतान का क्रास टेरियर्स से हुआ, जिसका परिणाम मैं हूं।

पिल्लू : तो तुम्हारे यहा अन्तरजातीय विवाह होते थे।

गोल्डी : हा, धनवानो मे अन्तरजातीय विवाह ही होते हैं। पर ये जातियां सब होती बडी ही हैं, जैसे—सेन्ट बर्नार्ड, बुलडॉग, बीगल, टेरियर्स आदि तुम्हारी तरह लेंडी नही।

पिल्लू : लेकिन हमारे यहा एक नेता आये थे, वह तो कह रहे थे कि अब जाति-पांति समाप्त हो गई। शहरो में तो बिलकुल नही है।

गोल्डी : अच्छा उस नेता का नाम क्या था?

पिल्लू : (कुछ सोचते हुए) गयादीन ।

गोल्डी : अच्छा गयादीन एम० एल० ए० । अच्छा, तुम एक काम करो । अपना भ्रम दूर करने के लिए गयादीन के घर ही चले जाओ । तुम मेरी बात तो मानते नहीं । वहां तुम्हारी आखें खुल जायेंगी ।

पिल्लू : उनका घर है कहा ?

गोल्डी : देखो, यह सिविल लाइन्स है । इसी रोड से सीधे चले जाओ दो चोराहे छोडकर इस कॉलोनी का जो सबसे अच्छा मकान है वह गयादीन एम० एल० ए० का है । किसी से पूछ लेना । कोई भी बता देगा ।

पिल्लू : अच्छा भइया, धन्यवाद ।

गोल्डी : तुम बिल्कुल लेडी सो नही हो, धन्यवाद बोल लेते हो । पर तुम अच्छी जाति के होते तो तुम 'थैंक यू' बोलते । तब मैं 'मेन्शन नॉट' कहता । ठीक है 'गुडलक' ।

इतना कहना ही था कि कोठी के अन्दर से एक बहुत ही सुन्दर युवती पुकारती हुई आई "गोल्डी ! रामू तुम्हारे लिए 'मीट' लाया है आओ नाश्ता कर लो ।" सुन्दरी गोल्डी को अपनी गोदी में प्यार करती हुई ले गई । पिल्लू बाहर खड़ा गेट की ग्रिल में से देखता रहा । अन्दर गोल्डी 'मीट' खाता रहा । पिल्लू आश्चर्य से यह देखता रहा और सोचने लगा कि मैं तो पहली बार इस शहर में आया हूं । मैं गोल्डी का अतिथि हुआ । शायद मुझे भी कुछ खाने को दे । पर ऐसा नही हुआ । इसी बीच सुन्दर युवती की नजर पिल्लू पर पड गई । उसने गोल्डी की ओर देखा । वह भी पिल्लू की ओर देख रहा था । सुन्दरी को चिन्ता हुई कि कही अपनी गोल्डी की दोस्ती इस देसी कुत्ते से न हो जाए । उसने रामू को बुलाया और डांटते हुए पूछा—"अपनी कॉलोनी में यह देसी कुत्ता कहां से आ गया ? इसे भगाओ ।" रामू ने कुछ सोचते हुए कहा—"बीबोजी, रात का कुछ जूठा पड़ा है, इस कुत्ते को दे दू । वेकार ही तो जाएगा ।" सुन्दरी ने कहा—"जाने दो बेकार । यह देसी कुत्ते हैं । एक बार मुंह लग गए तो रोज यहीं आकर खड़े हो जाएंगे । अपनी गोल्डी को इससे खतरा है ।"

आज्ञाकारी रामू ने डंडा लेकर देसी कुत्ते को वहां से भगा दिया। पिल्लू उदास हो गया। उसे आशा की किरण दिखाई दी थी वह भी अब न रही। जब वह पूछता-पाछता गयादीन की हवेली पहुंचा तो हवेली के बाहर उसे कुछ अपनी ही तरह का देसी कुत्ता दिखाई दिया। पिल्लू ने पूछा, "क्यों भाई, गयादीन का मकान यही है?" दूसरे कुत्ते ने, जिसका नाम टिल्लू था बताया, "हां, पर तुम उनसे क्या लेने आए हो? किसी को नौकरी दिलाने की एजेंटी करते हो और पैसा लाए हो, तो बिना रोक-टोक चले जाओ अन्दर।"

पिल्लू : नहीं भइया! गयादीन हमारे गांव आए थे और कहकर गए थे कि जाति-पाति का बन्धन अब समाप्त हो गया है। शहर मे एक ही होटल में सब जाति के लोग खाते हैं। हमने तो यह भी सुना था कि शहर मे कुत्तो के बड़े ठाठ हैं। एक कुत्ते की देखभाल के लिए चार-चार आदमी होते हैं। घर का मालिक कुत्ते को कार में घुमाने ले जाता है। उसका नौकर कुत्ते के लिए 'मीट' लाता है। घर की मालकिन उसे अपने हाथ से मीट खिलाती है। मालिक की सुन्दर लड़की सुबह-शाम कुत्ते को घुमाने ले जाती है। वह मालकिन के शरीर से सटकर सोता है।

टिल्लू : तुम्हारा कहना तो ठीक है। पर यह सब कुछ देसी कुत्तो के साथ नहीं होता। ऊंची जाति के विदेशी कुत्तो के साथ होता है।

पिल्लू : कुत्तो में यह भेद-भाव क्यो? वह भी प्रजातन्त्र मे जहा सब बराबर है।

टिल्लू : अरे भाई! यह असमानता तो सनातन काल से चली आई है। एक युधिष्ठिर का कुत्ता भी था। वह कोई देसी कुत्ता थोडे ही था। जरूर किसी अच्छे खानदान से होगा। और भाई, यह अन्तर तो मनुष्यो मे भी है। कारपोरेशन के स्कूल मे पढ़ते गरीब बच्चो को देखो, और कान्वेंट मे पढते अमीर बच्चों को देखो। क्या तुम्हें हम में और

मनुष्य मे यह सयानता नजर नही आती ?

पिल्लू : तो क्या तुम कहना चाहते हो कि कोई परिवर्तन नहीं हुआ ?

टिल्लू : परिवर्तन ! परिवर्तन यदि होता है तो राजनीति में जाकर और वह भी सत्ता मे आकर ही जाति ऊंची हो जाती है। अब हमारे गयादीन काका को ही देखो। मैं उन्ही के गांव का हू। उन्ही ने मुझे छुटपन में अपनी गोद में खिलाया है। अब जब वह एम० एल० ए० होकर शहर चले आए, तो उन्हें अपना 'स्टेटस' बनाने के लिए अल्सेशियन कुत्ता पालना पडा और मुझे घर से निकाल दिया।

पिल्लू : तुमने विरोध क्यो नही किया ?

टिल्लू : सोचा था करू। पर बाद मे पता चला कि गयादीन सत्ता पार्टी मे हैं और विरोध किया तो मरवा डालेंगे। इसलिए चुप रहा। और मैं ही क्या, मेरी मालकिन, जिनको यह गयादीन काका ब्याह कर लाए थे, घर में चुपचाप पडी रहती हैं। गयादीन के साथ पार्टियो में उनकी सुन्दर स्टैनो जाती है। कुछ काकी के लिहाज से भी इस घर के दरवाजे पर पडा रहता हू। हमारे गाव के लोग जब मिलने आते हैं तो अपने गाव का कुत्ता समझकर टुकड़ा डाल देते हैं। मेरा गुजारा हो जाता है। मै इसी से संतुष्ट हूं।

पिल्लू : तो भइया, क्या बरावरी नहीं आई है प्रजातंत्र मे ?

टिल्लू : देखो भइया ! हम तो भारतीय ठहरे। करम मे और जन्म मे विश्वास है। हमने पिछले जन्म मे बुरे करम किए होगे तो देसी कुत्ता बने। सबकी ठोकर खाते हैं, टुकड़ो पर पलते हैं। वह अन्दर जो अल्सेशियन 'रोम्बो' पलता है उसने पिछले जन्म में अच्छे करम किए होंगे।

पिल्लू : भइया ! इस जन्म-जन्मांतर के सिद्धात ने तो सब गड़बड़

किया है। हम सब बराबर है। क्यो न हम सब लोग संगठन बनाएं ?

थोड़ी कहा-सुनी के बाद दूसरा कुत्ता भी तैयार हो गया। एक सप्ताह दोनो कुत्तो ने शहर मे दौड़-धूप की। शहर में जब ये कुत्ते घूम रहे थे, तब उन्होने लाउडस्पीकर पर एक प्रवचन सुना। कलयुग मे आज लोग व्यवस्था के विरुद्ध भाषण करते है पर स्वयं नही मानते। अपने घरो मे अच्छी जाति के कुत्ते पालते हैं। मैं उनसे पूछता हू कि ये नेता लोग, जो बराबरी की बात करते हैं अपने घरों मे देसी कुत्ते क्यों नही पालते ? देसी जाति की गायो को छोड़कर जर्सी गाय क्यो पालते है ? अल्सेशियन डॉग, फ्रेंच पूदिल, बीगल, बुल डॉग और देसी कुत्तो में क्या तुलना हो सकती है ? जातियो में ऊंच-नीच तो जन्म के पिछले कर्मों के आधार पर होती है।"

गयादीन का देसी कुत्ता (टिल्लू) यह सुनकर 'नर्वस' होने लगा। पिल्लू ने समझाया कि यह तो सब धूर्त प्रचारक है। प्रजातन्त्र मे सब बराबर होते है। इस वाक्य से दूसरे कुत्तो मे कुछ आशा बधी और वे फिर आदोलन की तैयारी मे लग गए। सब देसी कुत्तो ने पूर्णमासी की रात को गयादीन के बगले के पीछे इकट्ठे होने तथा आदोलन की तैयारी का कार्यक्रम बनाने का निश्चय किया।

पूर्णमासी की रात को सब देसी कुत्तो की मीटिंग हुई। गयादीन का पुराना कुत्ता अध्यक्ष और पिल्लू सचिव चुने गए। एक सप्ताह बाद फिर वही मीटिंग बुलाई जाए, यह तय हुआ हममें समानता लाने के लिए क्या उपाय किए जाएं, इस पर चर्चा होगी, यह कहकर मीटिंग समाप्त की गई।

दूसरे दिन सुबह जब चाय के समय गयादीन को डाइनिंग टेबल पर उनके रोम्बो (अल्सेशियन डॉग) ने रात को हुई मीटिंग का हाल बताया। गयादीन को ताव आ गया। वे बोले, "इसकी यह हिम्मत। हमारे टुकड़ों पर पल रहा है और हमारे यहा से बगावत। रोम्बो, तुम घबराओ मत। मैं तो तुम्हे जान से ज्यादा प्यार करता हू। मैंने तुम्हे अपने बच्चे के

समान पाला है। लेडी कुत्ता तुम्हारा

फिर भी रोम्बो ने शंका व्यक्त की

मिलकर···।" गयादीन ने वाक्य नहीं

मेयर साहब, हमारे मुहल्ले में कुछ लेडी कुत्ते आ गए हैं। उन्हें अपने जमादारों को भेज कर पकड़वा लो।"

थोड़ी देर बाद कार्पोरेशन की एक गाड़ी आई। उन दो कुत्तों के साथ आठ-दस कुत्ते पकड़कर ले गई, उनका जीवन समाप्त करने के लिए।

कार्पोरेशन की गाड़ी के सीकचों में से बाहर की दुनिया स्पष्ट दिखाई दे रही थी। स्वतंत्र वातावरण। टिल्लू आंखों में आंसू लाकर बोला, "पिल्लू ! इससे तो हम बाहर ही भले थे। गयादीन के यहां झूठा-झाठा सही, पर माल तो खाने को मिल जाता था। तुमने गांव से आकर आग लगाई और साथ में मैं भी चपेट में आ गया।"

पिल्लू : तुम जूठे खाने से संतोष कर लेते थे। यह तुमने अपनी नियति मान ली थी। यदि सब लोग यही सोचें, तो अत्याचार के विरुद्ध लड़ेगा कौन?

टिल्लू : लड़ने को मारो गोली।

इतने में पिल्लू ने बाहर कुछ देसी कुत्ते देखे। वहां गाड़ी रुक गई। पिल्लू जोर-जोर से भौंकने लगा और बाहर के कुत्तों को खतरे का सिग्नल दे दिया। कुत्ते भाग गये। गाड़ी वाला कोई कुत्ता नहीं पकड़ सका। पिल्लू बड़ा खुश हुआ और टिल्लू से बोला, "देखो, हम लोग कुत्ते हैं। सड़क पर मरते और कहलाते कुत्ते की मौत मरे। अब हम लोग अपने साथियों के अधिकारों के लिए लड़ें और इस कारण हमको सूली पर चढ़ाया जा रहा है। यह शहादत है। हम लोग क्रांति की चिंगारी रात को अपने भाषणों में छोड़ आए थे। उसी भीड़ में से कोई और पिल्लू या टिल्लू पैदा होगा। यह क्रांति की चिंगारी जलती रहेगी। अंत में हम समानता का अधिकार लेकर रहेंगे।"

पिल्लू जब यह कह रहा था, उसकी आंखों में तेज था, हृदय में उत्साह था। इस आशावादी दृष्टिकोण ने टिल्लू को भी एक उद्देश्य के लिए

हसते-हंसते मरने का साहस दिया।

पिल्लू क्रांति के उद्घोष के रूप में जोर-जोर से भौकने लगा। टि
भी भौकने लगा। उस गाड़ी मे जो और कुत्ते थे, जो इनकी बातचीत सु
रहे थे, वे भी जोर से भौकने लगे। सबके मन मे आशा थी कि उ
सामूहिक शोर सीकचों के बाहर पहुचेगा और उनके भाइयों के लिए प्रेरण
स्रोत का कार्य करेगा।

# पति-पत्नी न्याय के कठघरे में

सरकार ने शक्कर का इसलिए राशनीकरण किया है कि अपने देश में शक्कर कम होती है और सरकार प्रत्येक जागरूक नागरिक से यह आशा करती है कि वह उतनी ही शक्कर का इस्तेमाल करे जितनी उसे राशन से मिलती है। मैंने जब अपना राशन कार्ड बनवाया, तब मेरे पिता भी थे और मां भी और एक अदद साला। इस साले का प्रवेश तो इस घर में इसलिए हुआ था कि वह हमारे यहां से बी० ए० करेगा, लेकिन वह वास्तव में मेरी पत्नी द्वारा मेरे ऊपर खुफिया निगरानी के लिए नियुक्त किया गया था। खैर, जब तक वह था, वह सबसे ज्यादा शक्कर इस्तेमाल करता था। चूंकि वह पत्नी का भाई था, अतः उससे हिसाब कौन लेता। जब वह चला गया और माता-पिता भी स्वर्ग सिधार गए, तब भी राशन कार्ड में वे सदस्य बने रहे और हम उनके नाम की शक्कर खाते रहे।

जब बच्चे बड़े होने लगे, जिनमें एक अदद लड़की भी थी, तो पत्नी ने चेतावनी दी कि लड़की के दहेज के लिए पैसे जोड़ने हैं, अतः अब खर्च हाथ रोककर किए जाएं। जहां-जहां कटौती संभव है, वहां की जाए। कटौती के खास मुद्दे जो सुझाए गए, वे ये थे—दिन में केवल दो या बहुत से बहुत तीन सिगरेट, सप्ताह में कम से कम दो दिन साइकिल से दफ्तर जाना, होटलबाजी नहीं करना और घर में भी चाय केवल एक बार पीना। यदि कोई आए भी, तो यह कहकर टाल देना कि मैंने तो चाय अभी-अभी पी है।

लड़की के दहेज जुटाने की बात कुछ ऐसी थी जिसको कि नकारा नहीं जा सकता था। इसीलिए मैंने अपनी पत्नी की सभी शर्तें मान लीं। हां, मेरी यह गलती जरूर हुई या इसे आप मेरा डरपोकपना भी कह सकते

हैं कि मैं अपनी पत्नी से ऐसा कोई तिरवाचा नही भरवा सका जिनसे वे अपनी साड़ियो की सख्या मे, सौन्दर्य-प्रसाधनों मे या अपने मायके से आने वाले मेहमानों आदि पर हुए खर्चे में कटौती करें।

एक बार पत्नी ने मुझे अपनी चाय के प्याले में दो चम्मच शक्कर डालते हुए देख लिया। बस, फिर क्या था? उनका प्रोफेसरी भाषण मुझे लगातार कई दिनों तक सुनना पड़ा। चूंकि मेरी पत्नी प्रोफेसर है, इसलिए कम से कम वे 45 मिनट तो बिना रुके बोलने की आदी हैं ही। उनके भाषण का सार यह था कि घर में सबसे अधिक शक्कर मैं ही इस्तेमाल करता हू। इस उम्र मे मुझे इतनी शक्कर खाना शोभा नही देता। 40 वर्ष के बाद तो विशेषकर लेखकों को डायबिटीज आज नही तो कल होनी ही है। इसलिए शक्कर का कम से कम इस्तेमाल अभी से ही कर देना चाहिए पता नही क्यों मैं भी आज पत्नी से युद्ध करने को तैयार बैठा था। मैंने भी उनके ऊपर खूब आरोपो की बौछार की। मैंने कह डाला कि घर मे चीनी ज्यादा उठने का कारण तुम्हारी सहेलियां हैं। जब भी कोई नई चीज घर आती है, तुम ही सब पड़ोसियों को बुलाकर चाय पिलाती हो। इस छोटी सी तू-तू मैं-मैं ने महाभारत का रूप धारण कर लिया। दोनों ओर से तीखे व्यंग्य-बाणों की वर्षा होने लगी। मेरे किशोर पुत्र-पुत्री इस महाभारत के विकराल रूप को देखकर आपस में खुस-फुस करते बाहर चले गए। मानो वे यह तय करने गए हों कि यदि महाभारत लम्बा चला तो किस पक्ष की ओर से लड़ना उनके हित में होगा। जब यह महाभारत अपने चरमोत्कर्ष पर था और किसी की जीत और हार अनिर्णित-सी थी कि पड़ोस मे रहने वाले रिटायर्ड जज मिश्राजी ने पदार्पण किया। हम लोग इस युद्ध में इतने लिप्त हो गए थे कि साधारण शिष्टाचार भूलकर उनके सामने अपना रोना रोने लगे।

जज महोदय ने दोनो पक्षो को ध्यान से सुना और समझाते हुए जजी मुद्रा में कहा—"अभी आप लोग रोष मे हैं। ठंडे हो जाइए, मैं कल इसी समय आऊगा और इस बात की न्यायिक जाच करूंगा कि दोषी कौन है।" हम लोग भी गला फाड़-फाड़ कर चिल्लाने के कारण थक चुके थे और युद्ध-विराम का कोई बहाना ढूंढ रहे थे। जज साहब के इस कथन से राहत

मिली। हम दोनो ने उन्हें नाश्ता कराया और कल फिर पधारने के निमन्त्रण के साथ उन्हें विदा किया।

दूसरे दिन जज महोदय निर्धारित समय मे पूर्व ही पधार गए। पत्नी ने उनके लिए बडा ही अच्छा स्वादिष्ट नाश्ता तैयार किया, जिसमें हलवा और मेवे के लड्डू खास थे। जज साहब ने भारी-भरकम नाश्ता समाप्त कर एक डकार ली और न्यायिक जाच की घोषणा की। सबसे पहले उन्होने अपनी न्यायिक जांच की प्रक्रिया से हम लोगों को अवगत कराया। उन्होंने कहा, "सबसे पहले आप लोग अपना-अपना स्टेटमेट दीजिए। फिर आप दोनो को एक-दूसरे को 'क्रास इग्जामिन' करने का मौका दिया जाएगा।" फिर अपने पक्ष को मजबूत करने के लिए साक्ष्य के रूप में आप अपने बच्चों, पड़ोसियो व मित्रों को पेश कर सकते हैं। इस काम के लिए हमे दो सप्ताह का समय दिया गया। दूसरे दिन से जज साहब की जांच प्रक्रिया शुरू हुई। हम दोनों ने अलग-अलग अपने बच्चों को पड़ोसियों को लालच देकर, रिश्वत देकर अपने-अपने पक्ष मे दलीलें देने के लिए तैयार किया। पर मेरे साथ एक समस्या थी। जज साहब के पैने प्रश्नो के सामने मैं घबडा जाता और कुछ का कुछ बोल बैठता। मुझे लगा कि यह मेरे हित मे नही है।

बहुत विचार करने के बाद मेरे दिमाग मे एक योजना आई। क्यों न किसी वकील की सलाह ली जाए। फिर सोचा कि घर का मामला है, बाहर वाले को बुलाकर घर की बदनामी ही होगी। जज साहब की तो दूसरी बात है। एक तो वे जज है, दूसरे वे अपने मित्र भी हैं। फिर एक-दम विचार कौंधा। मेरे छोटे भाई ने अभी-अभी वकालत शुरू की है। खास चलती नही। उसे अपने घर बुला लें।

मैंने अपने छोटे भाई रमेश को यह कहकर बुला लिया कि बहुत दिन से तू आया नहीं है। एकाध सप्ताह यहां रह जाएगा। आज्ञाकारी भाई मेरे कहने पर तत्काल आ गया। मैंने बातो ही बातों मे उससे सलाह ली। उसकी सलाह का यह लाभ हुआ कि अब मैं झूठ को इस तरह बोलने में प्रवीण हो गया कि वह सच लगे और सच के सिवा कुछ न लगे। अब मैं जज साहब के सामने बिल्कुल नहीं घबड़ाता। उनके प्रश्नों के उत्तर मैं

गोल-माल भाषा मे देने लगा और मेरा भाई उनकी व्याख्या इतनी अच्छी तरह करता कि मुझे खुद आश्चर्य होता कि ऐसा तो मैंने कहा ही नही था। खैर !

अब मैंने देखा कि कुछ दिनों पहले जो मेरा हाल था, वह अब पत्नी का हो गया है। वे अब क्रास क्वश्चन का ठीक से उत्तर नही दे पाती। दो-चार दिन बाद मैंने देखा कि मेरी पत्नी की छोटी बहिन उमा, जिसने अभी-अभी वकालत शुरू की थी, उनकी मदद के लिए आ गई। नतीजा यह हुआ कि अब दोनों पक्ष सफाई से इस प्रकार झूठ बोलने लगे कि जज साहब को सच लगने लगे।

यह न्यायिक प्रक्रिया दो सप्ताह तक चली। जज साहब दो हफ्तों तक हम लोगो का माल उड़ाते रहे। पड़ोसी, मित्र तथा बच्चो पर भी हम लोगों को अलग-अलग चुपके-चुपके खर्च करना पड़ा। इन सब मे बच्चो के साक्ष्य सबसे ढिलमुल थे। एक दिन यदि लता पापा के पक्ष में साक्ष्य दे देती, तो राजू मम्मी के पक्ष मे। दूसरे दिन राजू पापा के पक्ष में, तो लता मम्मी के पक्ष मे साक्ष्य दे देती। बच्चों के साक्ष्य कुछ इस प्रकार के थे कि उनसे हम दोनों ही तिलमिला उठे और ऐसी बातें प्रकाश मे आयी कि कदाचित हम दोनो जीवन-पर्यंत एक-दूसरे से छुपाना पसन्द करते। एक बच्चे के साक्ष्य से पता चला कि जब मम्मी कॉलेज जाती है तब पापा नौकरानी को एक-दो कटोरी शक्कर उधार दे देते हैं। यह उधार ऐसा रहता न तो नौकरानी कभी उसे उतारती और न ही पापा उस उधार को चुकवाने मे रुचि रखते। यह भी एक छुपा सत्य उजागर हुआ कि जब पापा 'टूर' पर जाते हैं। तब मम्मी के मायके के कुछ लोग, जिन्हें मम्मी अपना भाई बताती हैं, इस घर में स्वादिष्ट पकवानो का आनन्द लेते है। उन पकवानो को बनाने में शक्कर का प्रयोग मुक्त हस्त से होता है।

इन सब तथ्यों के प्रकाश मे आने से हम दोनो ही तिलमिला उठे। सोचने लगे कि पति-पत्नी के मधुर सम्बन्ध बनाए रखने के लिए कुछ आवरण कितने आवश्यक हैं। काश, ये आवरण छुपे ही रहते।

जिन दोस्तों और रिश्तेदारो को साक्ष्य के लिए पेश किया जाता, उनके लिए भी अच्छा और भारी नाश्ता दिया जाता।

दो सप्ताह के बयानात के बाद जज महोदय ने घोषणा की कि वे अपना निर्णय आज से लगभग एक सप्ताह बाद सुनाएंगे। यह सप्ताह हम दोनो के लिए भी बड़ा संशयात्मक था। मैं ऑफिस से आते-आते जज साहब के घर हो आता। कभी उनके लिए, कभी उनकी पत्नी के लिए, तो कभी उनके बच्चों व बहुओं के लिए छोटा-मोटा उपहार ला देता। विश्वस्त सूत्रों से पता चला कि हमारी पत्नी भी जज को प्रसन्न करने के लिए नए-नए पकवान व अचार जज साहब के घर पहुंचा देतीं।

जज साहब की न्यायिक जांच के परिणाम जानने के लिए हम दोनों ही बहुत उत्सुक थे। जब जज साहब ने हमारे घर में प्रवेश किया तो रोज की भांति पत्नी ने उन्हें अच्छा नाश्ता कराया। उन्होंने आज डकार नहीं ली। उन्होंने अपना निर्णय पढ़कर सुनाया। इनमे शुरू से लेकर आखीर तब सबके बयानात, क्रास इग्जामिनेशन, गवाहों आदि के बयानात आदि थे। पति-पत्नी के सम्बन्धों के बारे में टिप्पणी थी।

अंत मे निर्णय यह था कि घर के सभी लोग उतनी ही मिठास इस्तेमाल करते हैं जितनी वे पहले करते थे। चूंकि शक्कर मे अब मिठास कम हो गई है, अतः सभी को उतनी मिठास के लिए शक्कर की अधिक मात्रा इस्तेमाल करनी पड़ती है। यह चिंता का विषय नहीं है। आज से इस विषय में दोनो पक्ष झगड़ा न करें और आदर्श पति-पत्नी की भांति रहें।

जज साहब के जाने के बाद हम दोनो ही ठगे हो चुके थे। हम दोनों ही इस निर्णय से संतुष्ट नही थे। मैं संतुष्ट तब होता जब आरोप पत्नी पर सिद्ध होता और पत्नी संतुष्ट तब होती जब दोषी मैं ठहराया जाता। लेकिन ऐसा कुछ नही हुआ। अतः हम दोनों ही जज साहब से असंतुष्ट थे। हम दोनो जब खुले, तो ये तथ्य सामने आए। हर माह हम लोगो के घर बारह किलो शक्कर आती थी। इस जांच आयोग की कार्रवाई के कारण इस माह तीस किलो शक्कर का इस्तेमाल हुआ।

अब मिल-बैठकर हिसाब लगाया कि इतना धन आया कहा से। मेरी पत्नी ने मुझसे छुपाकर करीब चार सौ रुपए जोड़े थे, वे सब स्वाहा हो गए। मुझे भी अतिरिक्त व्यय को वहन करने के लिए अपने एक मित्र से तीन सौ रुपए उधार लेने पड़े थे।

अब हम दोनों एक-दूसरे की ओर ताक रहे थे। सोचते जा रहे थे कि काश, हम दोनों ही अपना फैसला खुद कर लेते।

इतने में रमेश और उमा ने एक साथ घर में प्रवेश किया और मेरे पैर छूने लगे। मैंने पूछा—"यह क्या है ?"

रमेश शरमाते हुए बोला, "भाई साहब, माफ करना। मैंने, मैंने···।"

"हां, हां, बोलो।"

"मैंने और उमा ने सिविल मैरिज कर ली है।"

मेरे लिए आशीर्वाद देने के अलावा कुछ चारा ही क्या था।

मेरी पत्नी ने मुस्कराते हुए कहा, "चलो अच्छा हुआ। हम लोगों के आपस के झगड़े में चलो तुम्हारा घर तो बस गया।"

इस बात पर हम सभी लोगों ने ठट्ठा लगाया। पर मेरी हंसी सीमित थी। कहीं इस शादी की पार्टी देनी पड़ी तो···।

# श्रद्धांजलि एक साहित्यकार की

देश की राजधानी में सब कुछ होता है। इसीलिए पूरा देश राजधानी के चारों ओर उसी प्रकार घूमता है जिस प्रकार सूर्य के चारों ओर ग्रह। कलाकार को प्रसिद्धि तब मिलती है जब राजधानी उसको मान्यता दे। राजधानी में गतिविधिया होती रहती है। जिस देश की राजधानी मे जितनी अधिक गतिविधिया होती हैं, वह देश उतना ही अधिक गतिशील और विकसित माना जाता है। इसीलिए राजधानी में सैकड़ो सांस्कृतिक व साहित्यिक मंच होते हैं जो अखाडो के समान अपने कलाकार को ऊपर उठाने और शत्रु पक्ष के कलाकार को धराशायी करने, उसकी धज्जी उड़ाने, उसकी छवि बिगाड़ने आदि का काम करते है।

राजधानी के एक कॉफी हाउस ने चार विभिन्न विभागों से आए हुए व्यक्तियो की मित्रता करा दी। इस मित्रमंडली मे एक रमेश बाबू थे, जो डाक विभाग में लिपिक थे। दूसरे थे श्री धनंजय, जो शिक्षा विभाग में निरीक्षक थे। तीसरे थे रवि बाबू, जो एक सरकारी कार्यालय मे ऑडीटर थे। और चौथे थे श्री ओमप्रकाश, जो रेलवे में कंडक्टर थे। इन चारो को कविता करने का शौक था। कविता करने से अधिक उन्हें सुनाने का शौक था और सुनाने से अधिक अपनी प्रशंसा सुनने का शौक था। शाम को प्राय: इन लोगों की कॉफी-हाउस में मुलाकात होती। वे अपने-अपने पैसों से कॉफी पीते और एक-दूसरे की कविता की प्रशसा करते। कुछ समय तक ऐसा ही चलता रहा। फिर चारो ने एक मंच बनाया, जिसका नाम रखा गया— सफलता मंच। इस मंच का तदर्थ सचिव रमेश बाबू को बनाया गया क्योंकि उनके सम्बन्ध काफी लोगों से थे और दूसरे वह चतुर भी अधिक थे। इस

मंच का दावा था कि वह उदीयमान कवियों को जनता तक पहुंचाकर उन्हें सफलता के आकाश तक ले जाएंगे।

सफलता मंच की नित नई योजनाएं बनतीं, पर धन की कमी के कारण उनका क्रियान्वयन ही नहीं हो पाता, सफलता का तो प्रश्न ही नहीं उठता था। जब मंच बनाया गया था, तब सदस्यों ने सोचा था कि नए सदस्य बनेंगे और उनसे सदस्यता शुल्क लिया जाएगा, जिससे कार्यक्रमों में कुछ गति आएगी। किन्तु दुर्भाग्य यह कि महीनों प्रयत्न करने के बाद भी शुल्क देने वाले सदस्य एक दर्जन से अधिक नहीं बन पाए।

दो वर्षों की कंगाली के बाद सफलता मंच की लाटरी खुल गई। हुआ यूं कि धनीराम मंत्री बन गए। यह वे ही धनीराम थे, जिनको राजधानी आने का पास मिलता था, पर वे अपने कम से कम आधा दर्जन समर्थों को बिना टिकट लाते थे। इस कार्य में ओमप्रकाश कंडक्टर उनकी विशेष मदद करता था। सौभाग्य से राजधानी की यात्राओं के दौरान धनीराम के पुत्र संजय से ओमप्रकाश की दोस्ती हो गई। दोस्ती का केवल यही कारण नहीं था कि ओमप्रकाश कंडक्टर उसे मुफ्त यात्रा कराता था, वरन् यह भी था कि संजय को भी तुकबन्दी, जिसे वह कविता कहता था, करने का शौक था। धनीराम के मंत्री बनते ही श्री संजय को सर्वसम्मति से मंच का अध्यक्ष बना दिया गया। इससे सफलता मंच में गर्मी आ गई। इनके कार्यक्रम अब उन अफसरों के बंगलों पर होने लगे, जो अपने को साहित्य-प्रेमी बताकर न केवल समाज में सम्मान प्राप्त करना चाहते थे, वरन् श्री संजय के माध्यम से मंत्री महोदय से कुछ 'आउट ऑव वे' जाकर लाभ भी उठाना चाहते थे।

सफलता मंच की प्रथम चौकड़ी ने सोचा कि मंच में जान डालने के लिए कुछ ऐसा किया जाए कि जनता में उनकी 'इमेज' ऊंची हो। कॉफी-हाउस में बैठे इसी पर चर्चा हो रही थी कि ऐसा कुछ क्या किया जा सकता है। उसी समय रमेश बाबू ने एक उपाय सुझाया। रमेश के गांव कमलपुरा का एक कवि, जो 'पुष्प' के नाम से कविता करता था, जवानी में ही मर गया। पिछले ही महीने, जब रमेश बाबू गांव से शहर आ रहे थे, तब उस कवि ने रमेश बाबू को अपनी कुछ कविताएं इसलिए दी थीं कि उनको

किसी पत्र या पत्रिका में प्रकाशित करवा दें। चूंकि पुष्पजी एक अल्पज्ञात कवि थे, अतः यदि मंच की ओर से उनकी श्रद्धांजलि का कार्यक्रम रखा जाता है, तो मंच की साख बढ़ जाएगी। जनता सोचने लगेगी कि सफलता मंच न केवल उदीयमान कवियों को प्रोत्साहित करता है, वरन् अल्पज्ञात कवियों को श्रद्धांजलि देने तथा उनकी रचनाओं को जनता के समक्ष लाने में अपना भरपूर योगदान देता है।

निर्णय लिया गया कि संजय के माध्यम से धनीरामजी को कार्यक्रम का मुख्य अतिथि बनाया जाए और उनके मित्र सेठ करोड़ीमल को अध्यक्ष पद पर सुशोभित किया जाए। यह कार्यक्रम रवीन्द्र भवन में सम्पन्न कराया जाए। इत्तिफाक से कमलपुरा के एक सेठ भी राजधानी आए थे। उन्हें शराब की दुकान का लायसेंस लेना था। रमेश बाबू ने उन्हें भी श्रद्धांजलि के कार्यक्रम में आमन्त्रित कर लिया।

पुष्पजी की श्रद्धांजलि के कार्यक्रम के लिए बहुत ही सुंदर और कीमती निमंत्रण-पत्र छपवाए गए। ये निमंत्रण-पत्र राजधानी के सभी साहित्यकारों, अफसरों और मंत्रियों को भेजे गए। चूंकि इस कार्यक्रम के अध्यक्ष मंत्री महोदय थे, अतः मंच का पूरा खर्चा उनके चुनाव-क्षेत्र के एक सेठ ने वहन किया।

रवींद्र भवन को दुल्हन की भांति सजाया गया। कार्यक्रम ठीक समय पर आरम्भ हो गया। मंच पर विराजमान थे—मंत्री धनीराम सेठ करोड़ीमल, सफलता मंच के सचिव रमेश बाबू तथा अध्यक्ष श्री संजय।

सफलता मंच के सचिव ने बताया कि उनका मंच सदैव ही प्रतिभाओं की कद्र करता रहा है। आज मंच एक ऐसे अल्पज्ञात कवि को श्रद्धांजलि अर्पित कर रहा है, जिसने सदैव संघर्ष और गरीबी का रास्ता चुना। उसने परिस्थितियों से कभी समझौता नहीं किया।

जब सचिव का भाषण चल रहा था, तभी मंत्री महोदय को याद आया कि उसके बाद उन्हीं को बोलना है। अतः कवि का पूरा नाम तो उन्हें जानना ही चाहिए। उन्होंने धीमे से 'पुष्प' जी का नाम करोड़ीमल से पूछा। करोड़ीमल ने अपनी अनभिज्ञता प्रकट की और पड़ोस में बैठे श्री संजय से पूछा। श्री संजय ने रमेश बाबू से पूछना उचित नहीं समझा, क्योंकि

सभा को सम्बोधित कर रहे थे । अतः वे मंच से उठे और श्रोताओं में आगे की सीट पर बैठे गुप्ताजी से उन्होंने काना-फूसी कर पुष्पजी का नाम पूछा । सेठजी ने, जिनके बहीखाते में पुष्पजी का पूरा नाम हमेशा उधार लेने के कारण लिखा रहता था, झट से बता दिया—बनवारी लाल शर्मा । संजय ने मंच पर आकर यह नाम सबके कानों तक पहुंचा दिया ।

जब मंत्रीजी का भाषण आरम्भ हुआ, तब आदतन कुछ श्रोताओं ने तालियां बजाकर उनका स्वागत किया । वे श्रोता यह भूल गए कि वे शोक सभा में सम्मिलित होने आए हैं । मंत्रीजी ने अपनी रोनी सूरत बनाते हुए कहा, 'भाइयो और बहिनों, यह खुशी का विषय है कि आपका मंच पुष्पजी की शोक सभा बड़ी धूमधाम से मना रहा है । प्रजातंत्र में इस प्रकार के कार्यक्रम होते रहने चाहिए । इससे जनता में कलाकार के प्रति प्रेम जाग्रत होता है । पुष्पजी तो नहीं रहे, पर उनके परिवार के लोगों के लिए हमारी सरकार से जो बन पड़ेगा, वह करेगी । मैं उनके बारे में बहुत कुछ बोलता, पर मुझे अपने एक साथी मंत्री की लड़की के विवाह में जाना है । आप लोग क्षमा करेंगे ।"

मंत्रीजी ने बीच में ही अनुमति ली और वे सबको हाथ जोड़कर नमस्कार करते हुए चले गए ।

सचिव ने मुख्य अतिथि सेठ करोड़ीमल की विशेष अनुमति से पुष्पजी के गांव के सेठ गुप्ताजी से दो शब्द कहने के लिए मंच पर आमन्त्रित किया । सेठजी अपनी धोती ठीक करते हुए धीरे-धीरे मंच की ओर चले । सेठजी मंच पर पहुंचते ही रोने लगे । श्रोता उनके रुदन से प्रभावित हुए । सचिव ने बड़े अनुनय-विनय से उनका रोना बंद करवाया । सेठजी ने कहा, "मैं व्यापारी, बोलना क्या जानूं । पुष्प जी हमारे गांव के दीपक थे । वे हमारे गांव में एकमात्र कवि थे । हम लोगों ने उनके जीते-जी उनकी कद्र नहीं की । मैं उनको जीवन भर नहीं भूल सकता । वे प्रायः शाम को मेरी दुकान पर बैठ कर बीड़ी पीते और कुछ सोचते रहते थे । भगवान उनकी आत्मा को शांति दे । मुझे बड़ी खुशी है कि हमारे गांव का आदमी इतना बड़ा था कि राजधानी में उसका समारोह हो रहा है । बनवारी लाल जी पर मेरे करीब दो सौ रुपए उधार थे । ऐसे अवसर पर मैं यह वायदा करता हूं कि

मैं ये रुपए उनको बीवी-बच्चों से वसूल नहीं करूंगा।"

श्रोताओं ने इस घोषणा का करतल ध्वनि से स्वागत किया। प्रबुद्ध श्रोता समझ गए कि यह साला क्यों इतना रो रहा था। उसे अपने पैसे डूबने का गम था। जानता था कि उसके भुक्कड़ परिवार से वह क्या पैसे वसूल कर पाएगा। अतः वह उधार माफ कर महान बन बैठा।

श्रोताओं में आगे की एक सीट पर राजधानी के जाने-माने कवि बैठे थे। यह कवि एक साहित्यिक पत्रिका का सम्पादन भी करते थे। सचिव श्री रमेश ने सोचा कि इस कवि-सम्पादक से भी निवेदन कर लिया जाए, अन्यथा वे बुरा मान जाएंगे। रमेश बहुत दिनों से उनको कृतार्थ करना चाह रहा था, पर अवसर हाथ नहीं आ रहा था। कृतार्थ करने का कारण यह था कि रमेश की कुछ कविताएं उनके पास प्रकाशन हेतु पड़ी थीं। जब सचिव ने कवि-सम्पादक से इस अवसर पर दो शब्द बोलने को कहा, तो वे सकपका गए, क्योंकि वे वहां बोलने के लिए नहीं, केवल एक अल्पज्ञात कवि की शोक सभा में अपनी भी उपस्थिति जताने आये थे। कवि की हालत खस्ता हो गई क्योंकि मना करना भी उन्हें अनुचित लगा। फिर भी कवि-सम्पादक का भाषण सबसे अच्छा रहा। उनके भाषण में पहले दो वाक्यों को छोड़कर जो पुष्पजी की श्रद्धांजलि के रूप में कहे गए थे, कुछ भी पुष्प जी के बारे में नहीं था। उन्होंने साहित्यिक गुटबन्दी की आलोचना की। नए साहित्यकारों को आह्वान करते हुए कहा कि वे अच्छा साहित्य लिखें और गुटबन्दी में न पड़ें। कवि महोदय ने मंत्री महोदय की भी भूरि-भूरि प्रशंसा करते हुए कहा कि उन्होंने एक अल्पज्ञात कवि की शोक सभा में आकर अपने साहित्य-प्रेम का परिचय दिया है। उस समय मंत्री महोदय जा चुके थे। किन्तु कवि को पता था कि उनका सुपुत्र और उनके चमचे मंत्री महोदय को बताने वाले हैं ही और दूसरे दिन यह बात समाचार पत्रों में भी बड़े अक्षरों में छपेगी। मंत्री महोदय के विभाग में एक उच्च पद रिक्त था। कवि चाहते थे कि यदि वे किसी प्रकार मंत्रीजी के कृपापात्र बन जाएं तो वहां सरलता से फिट हो सकते हैं। इसी कारण उन्हें अपनी अंतरात्मा को धोखा देकर यह सब करना पड़ा।

कवि-सम्पादक ने अपने भाषण के बीच-बीच में अपनी स्वरचित लघु

कविताओं से श्रोताओं को आनन्द-विभोर किया।

अन्त में सचिव ने अध्यक्ष श्री करोड़ीमल से निवेदन किया कि वे इस अवसर पर कुछ कहे। सेठ करोड़ीमल ने अपना भाषण पढ़कर सुनाया। वास्तव में यह भाषण सेठजी के सचिव ने लिखकर दिया था। यह भाषण इतना साहित्यिक था कि सेठजी के उच्चारण दोष से पता चल रहा था कि वे स्वयं उसका अर्थ नही समझते होंगे। लोग उनके उच्चारण दोष पर ताली बजा रहे थे। वे समझ रहे थे कि उनके भाषण में निहित साहित्यिक ज्ञान के कारण श्रोता मंत्रमुग्ध होकर उनकी प्रशंसा में ऐसा कर रहे हैं। उन्होंने आश्वासन दिया कि वे पुष्पजी के काव्य का प्रकाशन अपने प्रेस से रियायती दर पर कर देंगे।

अध्यक्षीय भाषण के बाद श्री संजय ने दो शब्द कहे। उसके बाद रमेश बाबू ने धन्यवाद का प्रस्ताव रखा। उन्होंने घोषणा की कि बाहर लॉन में सब लोगो के लिए कॉफी का प्रबन्ध सेठ करोड़ीमल की ओर से किया गया है। यह भी घोषणा की गई कि अगले महीने के प्रथम रविवार को सफलता मच के सभी सदस्य पुष्पजी के गांव कमलपुरा जाएगे, जहा उनका एक स्मारक बनाया जाएगा। इस स्मारक का शिलान्यास मंत्री धनीरामजी करेंगे। अन्य जो लोग इच्छुक हो, वे अपने नाम सचिव महोदय को चाय पार्टी के बाद दे दें। यह स्थान एक सुरम्य हिल स्टेशन है। ठहरने की व्यवस्था वहां की ग्राम पचायत करेगी। आने-जाने के किराए के रूप मे सौ रुपए प्रति व्यक्ति जमा किए जाएगे।

बहुत से श्रोताओं ने अपना नाम यह सोच कर दे दिया कि गर्मियों की छुट्टियां चल रही हैं, क्यों न वे बच्चों को हिल स्टेशन ही घुमा लाए। अपने सभी मित्र भी जा रहे है। कमलपुरा का एक तरफ का किराया ही सौ रुपए बैठता है। सब लोगों के साथ जाएगे तो पिकनिक का भी मजा आएगा और खर्चा भी कम लगेगा। इस प्रकार करीब पन्द्रह लोगो ने पैंता-लीस लोगों का किराया सचिव महोदय के पास जमा कर दिया। यह तय किया गया कि जाने वाले सभी लोग अगले महीने के प्रथम रविवार को प्रातः छह बजे सफलता मच के कार्यालय में इकट्ठे होंगे। बस वही से कमलपुरा के लिए छूटेगी।

कमलपुरा मे कवि पुष्प का स्मारक तथा मंत्री द्वारा उसके शिलान्यास की घोषणा के पार्श्व में धनीरामजी की सुनियोजित योजना थी। दो-तीन महीनो बाद चुनाव आने वाला था। कमलपुरा आता तो उन्ही के चुनाव-क्षेत्र में था, पर वे उस क्षेत्र मे केवल पिछले चुनाव के समय ही गए थे। उन्होने सोचा कि इस बहाने से वे गाव का दौरा भी कर आएंगे और चुनाव के पूर्व अपनी जनता को कुछ रेवडी बांट आएंगे। धनीरामजी ने अपने पुत्र श्री सजय के माध्यम से यह सब प्रस्ताव सफलता मंच की ओर से कराना अधिक उचित समझा।

दूसरे ही दिन श्री संजय कमलपुरा के लिए रवाना हो गए। वहां की पचायत पर सत्ता पक्ष की पार्टी का ही बहुमत था। जब श्री संजय ने पुष्प जी का स्मारक बनवाने तथा अगले महीने के प्रथम रविवार को मत्री द्वारा उद्घाटन करने की सूचना सरपंच को दी, तो वे बड़े प्रसन्न हुए और इस कार्य के लिए उन्होंने सब प्रकार का सहयोग देने का आश्वासन दिया। श्री संजय ने कुछ रसीद कट्टे छपवा लिये। एक कट्टा उन्होने थानेदार को दे दिया और अपना परिचय देकर कहा कि उसको पाच हजार रुपए मिल जाने चाहिए। थानेदार ने प्रसन्नतापूर्वक मत्री-पुत्र को आश्वासन दिया कि उसको एक सप्ताह के अंदर पांच हजार रुपए मिल जाएंगे। उस गांव मे पुष्पजी की जाति के लोग बहुमत में थे। वे गरीब थे। फिर भी वे इस बात का बड़ा गौरव महसूस करने लगे कि उनकी जाति के व्यक्ति का सम्मान हो रहा है। अतः उन्होंने अपनी जाति के हर घर से पाच-पांच रुपए का चंदा इकट्ठा करने का वचन दिया।

सरपंच का एक साला मूर्तिकार था। उसने हिसाब लगाया कि यदि पुष्पजी की मूर्ति कमलपुरा मे लगाई जाए, तब कम-से-कम पांच हजार रुपए का लाभ तो हो ही सकता है। अतः उन्होंने भी जी-जान लगाकर अपने गांव वालों से हजारो की तादाद में चंदा इकट्ठा किया।

सजय ने जिला मुख्यालय जाकर मंत्री-पिता का नाम लेकर तहसीलदार, डिप्टी कलेक्टर, पी० डब्लू० डी० के चीफ इजीनियर आदि के माध्यम से हजारों में चंदा इकट्ठा किया। इस प्रकार कुल मिलाकर लगभग एक लाख रुपए पुष्पजी के स्मारक के नाम पर एकत्रित किये गए।

नाम के लिए एक स्मारक समिति भी बनाई गई। पर इस समिति के सर्वेसर्वा श्री संजय थे। श्री संजय ने लोक-लाज के लिए समिति में गांव के सरपंच तथा गांव के गुंडा पहलवान श्री हनुमान सिंह को रख लिया था।

महीने का प्रथम रविवार आ गया। समारोह की पूरी तैयारी हो चुकी थी। मंत्री महोदय के आने की पूरी तैयारियां हो चुकी थी। इतने में गांव में यह खबर दावानल की तरह फैल गई कि पुष्पजी की पत्नी सख्त बीमार है। श्री संजय तथा सरपंच ने इस बात का भरसक प्रयत्न किया कि यह खबर गांव में न फैले और उनका आयोजन सफल हो जाए, किन्तु पुष्पजी की जाति के लोग इस बात पर अड़ गए कि पुष्पजी के पत्नी और बच्चे की बीमारी की हालत में वे यह कार्यक्रम नहीं होने देंगे। इस बात को लेकर गांव में तनाव बढ़ गया। जातीय दंगा होने के आसार नजर आने लगे।

मंत्रीजी के आगमन की सूचना के कारण पुलिस का जबरदस्त बंदोबस्त था। इसी कारण तनाव दब गया। दोपहर को राजधानी से एक बस आई, जिसमें सफलता मंच की ओर से आयोजित कमलपुरा ग्राम की यात्रा के लिए लगभग पचास लोग आए थे सभी यात्रियों को पंचायत-गृह में ठहराया गया। सभी यात्री पिकनिक के मूड में थे। अतः थोड़ी ही देर में वे अपने बीवी-बच्चों सहित गांव के आसपास के सुरम्य दृश्यों को देखने में लीन हो गए। सफलता मंच के सचिव रमेश बाबू कार्यक्रम को सफल बनाने के लिए श्री संजय का हाथ बंटाने लगे।

सरपंच के विशेष प्रयत्न से मंत्री महोदय के स्वागत के लिए आसपास के गावों से लोग बुलवाए गए थे। अत. अच्छी-खासी भीड़ थी। मंत्री आदि के बैठने के लिए एक भव्य मंच बनाया गया था। मंत्री महोदय का आगमन शाम चार बजे हुआ, यद्यपि घोषणा दो बजे की की गई थी। कार से उतरते ही लोगों ने उनका हार्दिक स्वागत किया।

प्रथम आधा घंटा तक विभिन्न सोसायटियों द्वारा मंत्री महोदय का पुष्पहारों से स्वागत होता रहा। श्री संजय मंच-संचालन कर रहे थे।

मंत्री महोदय ने अपने भाषण में वह सब कुछ कहा जो एक मंत्री कहता है। उदाहरणार्थ, उनकी सरकार जनता की भलाई के लिए क्या कुछ नहीं कर रही है। यदि कुछ नहीं हो पा रहा है तो उसका कारण यह कि विरोधी

दल अड़ंगे लगा रहे है, आदि-आदि। उन्होंने घोषणा की कि पुष्पजी के स्मारक के लिए सरकार की ओर से दस हजार रुपए का अनुदान दिया जाएगा। वे गाव का नाम बदलवाने का पूरा प्रयत्न करेंगे। पूरा कार्यक्रम पुलिस की छत्रछाया में धूमधाम से संपन्न हुआ।

दूसरे दिन राजधानी के सभी समाचार-पत्रो में प्रथम पृष्ठ पर यह खबर सुर्खियों मे छपी—साहित्य-प्रेमी मंत्री धनीराम द्वारा एक कवि के स्मारक का शिलान्यास।

कुछ समाचार-पत्रों के अंतिम पृष्ठ पर एक कॉलम की पांच पक्तियों मे यह भी खबर छपी कि कमलपुरा गाव में भूख और गरीबी से त्रस्त होकर एक दिवंगत कवि की पत्नी ने अपने छह महीने के बच्चे के साथ कुएं में कूद कर आत्महत्या कर ली।

# चमचे की गति

मौजीराम मरकर स्वर्ग पहुच गए। भगवान ने चित्रगुप्त से पूछा—"यह सफेदपोश स्वर्ग मे कैसे आ गया? पृथ्वी पर ये सफेदपोश बडे उत्पात मचा रहे हैं, लूट-खसोट कर रहे है, मैंने तो स्वर्ग मे इनके प्रवेश पर प्रतिबंध लगा दिया है।"

चित्रगुप्त ने कहा—"हुजूर, इसके नाम कोई बुरा काम नही लिखा है। इसने जिंदगी भर कोई काम ही नहीं किया, तो इसके द्वारा बुरे काम होने का सवाल ही नही उठता है। यह मृदुभाषी था, कभी कड़वा बोला ही नही। दूसरे, इसके मा-बाप बड़े पुण्यात्मा थे, उन्होंने समाज और देश की सेवा मे जीवन गंवाया। उनके संचित पुण्यो के फलस्वरूप ही इसको यहा लाया गया है।"

भगवान—"ठीक है, ठीक है। इसके योग्य कोई काम सौप दो। और मुझे सूचित करो।

चित्रगुप्त : "जी हुजूर।"

चित्रगुप्त ने मौजीराम से पूछा—"तुम पृथ्वी पर क्या करते थे? उसका विस्तार से बखान करो, जिससे तुम्हारी योग्यता व क्षमता के अनुकूल यहा काम दिया जा सके।"

मौजीराम : जैसा मेरा नाम है वैसा ही मैंने किया, मैं तो पृथ्वी पर मौज करता था।"

चित्रगुप्त : "यह तो ठीक है, पर कुछ तो काम करते होंगे।"

मौजीराम : "नही साहब, मैं तो अफसर था और मैं तो केवल दौरे करता था और मेरे अधीनस्थ, जहा कहते थे वहा हस्ताक्षर

कर देता था।"

दूसरे दिन चित्रगुप्त ने भगवान को यह सब जानकारी दी। भगवान ने उनको कुछ निर्देश दिए।

चित्रगुप्त : "मौजीराम जी, तुम पृथ्वी पर भले ही कुछ काम न करते हो, पर यहां तो काम करना ही पड़ेगा।"

"मैंने तो सुना था कि स्वर्ग में मजे ही मजे हैं। कुछ काम नही करना पड़ता।" दांत निपोरते हुए मौजीराम बोले।

चित्रगुप्त : "स्वर्ग के बारे मे आपकी जानकारी कुछ समय पूर्व तक ठीक थी, पर आज स्थिति बदल गई है।"

मौजीराम ने जिज्ञासा दिखाते हुए प्रश्न किया—"इसका कारण ?"

चित्रगुप्त : "इसके कई कारण हैं। जैसे प्राचीन काल मे पृथ्वी पर अन्न खूब होता था और मानव, यज्ञ में अन्न आदि की आहुति देकर हम तक पहुंचा देता था। अब पृथ्वी पर ही अन्न नही होता, वे हम तक कैसे पहुंचा सकते है। दूसरे, अब लोगों का कर्मकांड मे विश्वास भी नही रहा। जो दे सकते है, अब वे भी नही देते। हमारे भगवान भी समाजवादी हो गए हैं। उन्होने यह नियम बना लिया है कि स्वर्ग के हर प्राणी को कोई-न-कोई काम करना पड़ेगा। आप भी अपनी योग्यता के अनुरूप कोई काम चुन लीजिए।"

मौजीराम : "ठीक है। मैं भगवान से ही सीधे बात कर लेता हूं। आप उनसे मेरी भेंट करा दीजिए।" दूसरे दिन चित्रगुप्त ने मौजीराम की भेंट भगवान से करा दी।

भगवान को देखते ही मौजीराम ने साष्टांग प्रणाम किया और कहने लगे—"आप कृपानिधान हैं, कृपासिंधु हैं। दया के सागर है, पापियो के उद्धारक हैं। आप पालनकर्ता है।" भगवान यह सुनकर बड़े प्रसन्न हुए और सोचने लगे कि जब से स्वर्ग मे सब लोग काम करने लगे हैं, मेरे बारे मे कोई नही सोचता आज वर्षो बाद प्रशंसा सुनकर बडा अच्छा लगा।

मौजीराम भगवान के हाव-भाव देखकर ताड़ गए कि भगवान प्रसन्न

हैं। इसलिए मोजीराम ने भगवान की तारीफ में जी खोलकर अलंकारों का प्रयोग आरम्भ कर दिया। भगवान और प्रसन्न हुए और कहने लगे—"वत्स ! हम बहुत प्रसन्न हैं। वर मांगो।"

मोजीराम—"मुझे कोई वर-अर नहीं चाहिए, मुझे तो आपका सान्निध्य चाहिए।"

भगवान ने मन में सोचा कि यदि मोजीराम हमेशा साथ रहेगा तो इसी प्रकार मेरी प्रशंसा करेगा। अत. उसको अपने पास रखने का वचन दिया। भगवान ने जिज्ञासा व्यक्त की कि तुम्हारा पद क्या रहेगा?

मोजीराम बोले—"भगवान, इस काम को चमचागीरी कहते हैं। आप मुझे अपना 'चमचा' ही समझिए।"

भगवान : "यह चमचा क्या होता है? क्या नौकर को चमचा कहते हैं?"

मोजीराम . "नहीं हुजूर, नौकर काम करता है। चमचा तो केवल अपने मालिक की जी-हुजूरी करता है। उसके साथ ही वह अपने मालिक को यह भी खबर देता रहता है कि कहीं मालिक के विरुद्ध कोई षड्यंत्र तो नहीं चल रहा है। भगवान और प्रसन्न हुए और 'तथास्तु' कहकर चले गए।

दूसरे दिन से मोजीराम ने चमचे का कार्यभार सम्भाल लिया। धीरे-धीरे स्वर्गवासियों की भगवान तक सीधी पहुंच समाप्त हो गई और हर किसी को चमचे के माध्यम से ही भगवान से मिलने दिया जाता। कुछ महीनों में स्थिति यह हो गई कि स्वर्ग मे क्या हो रहा है, भगवान को पता ही नहीं चलता। चमचे पर भगवान का विश्वास बढ़ता गया। धीरे-धीरे उस चमचे के चमचे पैदा हो गए और उन चमचों के चमचे। यह क्रम बढ़ता रहा। परिणामत. जो ईमानदार कार्यकर्ता थे, उनको अब चमचों का भी काम करना पड़ता। धीरे-धीरे स्वर्ग में चमचे बढ़ने लगे और काम करने वाले घटने लगे।

धीरे-धीरे स्वर्ग की अर्थव्यवस्था गड़बड़ा गई। लोगों मे विद्रोह की भावना जाग्रत हो गई। और एक दिन विद्रोह हो ही गया। लोगों ने भगवान के महल पर पत्थरबाजी की और नारे लगाए। भगवान ने चमचे

से पूछा—"यह सब क्या है ?"

चमचे ने कहा—"यह सब कुछ असामाजिक तत्वों का काम है।"

भगवान : "इस विद्रोह की तुमने मुझे पूर्व सूचना क्यों नहीं दी ?"

चमचा : "मैं आपको ऐसी बातों से तंग नहीं करना चाहता था।"

भगवान : "लेकिन अब क्या होगा ?"

चमचा . "मैं देखता हूं।"

चमचा भगवान के महल की छत पर से बोला—"भगवान विश्राम कर रहे हैं। उनको तंग मत करो। तुम लोगों का एक डेलिगेशन बरामदे मे आ जाए और उनसे मैं बात करूंगा।"

लोग चिल्लाए—"हम केवल भगवान से बात करेंगे, तुम से नहीं। तुम धूर्त हो। तुमने ही स्वर्ग की शांति भंग की है।" भीड़ मे पीछे से आवाजें आई—"इस चमचे को ही मारो। इसी ने भगवान को गुमराह किया है। इतने मे एक-दो पत्थर चमचे को लगने के कारण खून बहने लगा। इतने मे भगवान भी बाहर आ गए, और लोगो को सम्बोधित कर बोले—"प्रजाजनों, तुम्हें क्या कष्ट है ? तुम्हे क्या चाहिए ?"

भीड़ मे से एक व्यक्ति बोला—"हुजूर, क्या आपको हमारी बिगड़ी दशा का ज्ञान नही है ?"

भगवान : "नही तो। मुझे तो चमचे ने यही बताया कि सब ठीक चल रहा है।

व्यक्ति : "यह झूठ है। हमारी स्वर्ग की आर्थिक व्यवस्था बिगड़ चुकी है। काम करने वाले कम होते जा रहे हैं। आपके चमचे के चमचे और उनके चमचे बढ़ते जा रहे हैं।"

भगवान ने चित्रगुप्त की ओर देखा। चित्रगुप्त ने कहा—"हां महाराज, ये ठीक कहते हैं।"

भगवान : "तुमने मुझे पहले क्यों नहीं बताया ?"

चित्रगुप्त : "हुजूर, आपका चमचा अब मुझे आपसे सीधे मिलने ही नहीं देता।"

भगवान : "ठीक है, इसका उपाय क्या है ?"

चित्रगुप्त : "हुजूर, आप चमचे का पद समाप्त कर दीजिए। और इस चमचे को वापस पृथ्वी पर भेज दीजिए। वहां चमचों की बड़ी मांग है।"

भगवान 'तथास्तु' कहकर चले गए। भगवान के आदेश से मौजीराम को पृथ्वी पर फेंक दिया गया। कुछ ही दिनों में स्वर्ग में फिर शांति और सौहार्द का वातावरण बन गया।

# केले किचिन गार्डन के

कश्मीर से कन्याकुमारी तक न जाने कितने पीरों-फकीरों की मजारों पर माथा टेका और चारों धामों की यात्रा की। इन सबके सामूहिक प्रभाव-स्वरूप शायद एक दिन भगवान् को ही तरस आ गया "बेचारा, हमेशा मुराद मांगता रहता है। कर ही दो पूरी।" नतीजन हाउसिंग बोर्ड से आठ वर्षों की भारी-भरकम किस्तों पर मकान मिल ही गया। जब महीनों की किस्त देता हूं तो नानी याद आती है। लगता है भगवान् ने मुराद पूरी करके मुझे कहीं दंडित तो नहीं किया है। पत्नी वित्तमंत्री की तरह व्यवहार करने लगी है जो हर खर्च में कटौती की सलाह देती है। जो पत्नी प्रेम से पकौड़े खिलाती थी, वही दुबारा चाय मांगने पर झल्ला उठती है, कहती है, "इस तरह चाय पिओगे तो किस्तें क्या तुम्हारे लड़के भरेंगे?" मन मसोस-कर रह जाता हूं।

इसी गम को गलत करने के लिए हमने सोचा कि आमदनी बढ़ाई जाए। मित्रों ने सलाह दी कि किचन गार्डन लगाइए। फल के पेड़ लगाइए, सब्जी उगाइए। 'आम के आम और गुठलियों के दाम' पैसे के पैसे बचें, पर्यावरण अच्छा हो, अपनी भी सेवा और देश की भी सेवा।

दो वर्षों की कड़ी मेहनत के बाद गार्डन तैयार हो गया। फलों में तो अभी बस केले आए और अनार आए। सड़क से जो भी गुजरता, वह केलों और अनार को देखने उसी तरह रुकता और देखता जिस प्रकार मनचले नवयुवक शोख लड़कियों को ताकते हैं। मुझे बड़ा गर्व होता है कि मैं अब न केवल एक घर का मालिक हूं, वरन् एक बगीचे का भी मालिक हूं। केले की जन्म-तिथि से लेकर अब तक मेरी पत्नी ने न जाने कितने अरमान संजो

रखे थे। फुरसत में वे अक्सर सुनातीं, "जब अपने केले आएंगे तब आधे पकाएंगे, कुछ के चिप्स और कुछ की सब्जी बनाएंगे, कुछ के पकौड़े और कुछ के दही बड़े बनाएंगे।"

पिछले महीने ही मेरी पत्नी ने नई महरी रखी थी। जब मेरी पत्नी महरी का साक्षात्कार ले रही थी, तब उसकी नजर केलों के गुच्छों पर थी। मैं तो उसी समय ताड़ गया कि उस महरी ने काम करना इसी कारण स्वीकार कर लिया कि इस घर से तो उसे केले और सब्जी मिलते ही रहेंगे।

वह चतुर महरी दूसरे-तीसरे दिन हम लोगों को केले और अनार में उसका भी हिस्सा रहेगा इसकी याद दिलाना न भूलती। वह अभिधा, व्यंजना और लक्षणा तीनों शब्द-शक्तियों से याद दिलाती रहती।

मोहल्ले के चौकीदार की चंचल निगाहों से भी हमारे केले न बच सके। वह अक्सर हमको याद दिलाता रहता कि साहब आपके केलों की क्वालिटी बड़ी अच्छी है। कई बार मुझसे केलों की जाति और जन्म-स्थान का जिक्र कर मुझे गर्व का अनुभव करा चुका था।

जैसे-जैसे गार्डन के फल बड़े हुए, घरवालों के मन में हरियाली छाई और पड़ोसियों की आशा लता लहराई। लोगों ने कहना शुरू कर दिया, "वाह, क्या कमाल के केले हैं। लगाए तो हमारे चाचा ने भी थे, पर आपके केलों की क्वालिटी तो देखने लायक है। जब पकें, तो चखाना मत भूलना।" मैं भी सबको मंत्री-आश्वासन दे देता, 'जरूर'।

केलों को देखकर सुन्दर पड़ोसिनें केले के पत्ते मांगने आ जातीं। वे कहतीं, "हमारे घर सत्यनारायण की कथा है। कुछ पत्ते दे दीजिए न।" उनके मांगने के अंदाज को देखकर मैं भला कैसे मना कर पाता। यदि कोई पड़ोसी भी पत्ते मांगता, तो भी मैं सगर्व दे देता। मैं सोचने लगा कि मैं भगवान् से बड़ा हूं। यदि मैं केले के पत्ते नहीं दूंगा, तब सत्यनारायण की कथा नहीं हो पाएगी।

एक दिन एक सुन्दरी ने मुझसे कहा, "अंकल, हमारे घर में कथा है। कुछ केले के पत्ते दे दीजिए।" मैं पत्ते तो सभी सुन्दरियों को उदारता से दे देता। पर चूंकि उसने मुझसे अंकल कहा था, अतः मैंने उसे मना कर दिया।

उसने फिर निवेदात्मक स्वर में कहा, "अंकल प्लीज ! आपने भाभी जी को तो केले के पत्ते दिए थे।" अब भला उसे कौन समझाता कि वे तो मेरी भाभी हैं और वे मुझे देवर मानती हैं। हर होली पर उनके गोरे गालो पर रंग लगाकर आता हूं। तू निगोड़ी कौन है जो मुझे अंकल कह रही है। तेरे लिए तो बस आशीर्वाद ही काफी है।

एक दिन एक पड़ोसी तो इतने साहसी निकले कि कहने लगे कि उन्हें बेटी की शादी के लिए स्वागत-द्वार बनवाना है। इस काम के लिए मेरे दो केले के पेड़ ठीक रहेंगे। उन्होंने यह नहीं सोचा कि यदि वे ही पूरे पेड़ ले जाएंगे, तो मेरे पास क्या रहेगा। अतः मैंने उनसे पड़ोसी धर्म न निभाना ही उचित समझा।

पड़ोस मे एक मुन्ना बीमार हुआ, तो उसकी सुन्दर मां मुझसे मुस्कराते हुए बोली, "भाई साहब, मुन्ना बीमार है। वे तो दौरे पर गए हैं, डॉक्टर ने अनार खाने को बताया है। यदि आप अनार दे दें, तो बड़ी कृपा होगी।" उसके रसिक हावभाव से जब उसने मुझे अप्रभावित देखा, तो वह बोली, "भाई साहब, वे आ जाएंगे तो हम बाजार से मंगाकर वापस कर देंगे।" तब तक अंदर से पत्नी निकल आई और मुझे सुन्दरी से बात करते देखा तो ताड़ गई कि यह साला जरूर ऑब्लाइज करेगा। पड़ोसिन ने अब मेरी पत्नी की ओर मुखातिब होकर कहा, "बहनजी, आपकी साड़ी का कलर कितना अच्छा है ! मैं तो सबसे कहती हूं कि 'कलर च्वाइज' तो मिसेज सक्सेना की है।" पत्नी तारीफ सुनकर गद्गद् हो गई और उसे अहाते में बुला लिया। पड़ोसिन ने अपनी भिक्षावृत्ति को नई शैली मे पेश किया। प्रभावित पत्नी ने दो अनार अपहृत कर दिए। भिक्षावृत्ति के ये नमूने देखकर लगने लगा कि मैं मूर्ख हूं जो पेड़ लगाए हैं। बुद्धिमान तो वे हैं जो मेरे पेड़ो का फायदा उठा रहे हैं, कभी फल खाकर तो कभी पत्ते मागकर।

जैसे-जैसे मेरे अनार पकते गए, डॉक्टर पड़ोसियो को अनार खाने की सलाह देते रहे और मुझे भी पता चला कि एक अनार और सौ बीमार का क्या मतलब होता है। थोड़े दिनो मे हमारे पेड़ के सब अनार समाप्त। मेरा लड़का बीमार पड़ा तो उसके लिए बाजार से अनार लाने पड़े।

थोड़े दिनों मे यही मुसीबत केलों पर ट्रांसफर हो गई। केले का पेड़

तोड़ा गया। पहले सोचा गया कि कुछ पका लें और कुछ की सब्जी बना लें। पडोस के शर्माजी देख रहे थे वे बोले, "क्या हो रहा है, सक्सेनाजी।" मैंने कहा, "देख नहीं रहे हो?" शर्माजी ने मुस्कराते हुए कहा, "वह तो देख रहा हूं। कुछ इधर भी नजरे-इनायत हो जाए।" जब उन्होंने यह प्रार्थना मेरी पत्नी को देखकर सबोधित की, तो पत्नी ने पांच केले पकड़ा दिए। जब शर्माजी चले गए तो पत्नी बोली, "जब पड़ोस में वर्माजी और चतुर्वेदीजी को पता चलेगा, तो उन्हें बुरा लगेगा, अतः पांच-पांच केले उनको भी भिजवा दो।" पत्नी का निवेदन मेरे लिए उसी प्रकार है जिस प्रकार प्रधानमन्त्री का निवेदन राष्ट्रपति के लिए। नाम मेरा असली शासक पत्नी। केले बांटते देखकर बड़े सपूत ने कहा, "मम्मी, मैंने अपने दोस्तों से बहुत दिनों से वायदा कर रखा है कि उन्हें कुछ केले अवश्य दूंगा।" मैंने कहा, "ठीक है, उनको भी दे दो तीन-तीन केले।"

*"बस तीन!"* सपूत ने आश्चर्यचकित होकर कहा, "यह तो अपशगुन है। वर्मा अंकल और शर्मा अंकल को पांच-पांच और मेरे दोस्तों को केवल तीन-तीन?"

"अच्छा बाबा, दे दो उनको भी पांच-पांच।" मैंने झुंझलाते हुए कहा।

जब शाम को मेरी पुत्री कॉलेज से आई, तो उन्होंने भी कहा कि उनकी दो सहेलियां तो कब से केले मांग रही थीं।

*उनको भी पांच-पांच केले दे दिए गए।* छोटे लड़के के दोस्तों को भी भेंट प्रदान की गई। महरी और चौकीदार का हिस्सा भी कैसे भूला जा सकता था।

पत्नी को दानी होने का सुख प्राप्त हो रहा था। "आजकल दान तो कोई देता नहीं, चलो इसी को दान समझ लो। इनमें तीन तो वैसे ही ब्राह्मण हैं।" पत्नी औचित्य समझाते हुए बोली।

मैंने कहा, "आपका सोचना बुरा नहीं है। पर अब यह तो बताओ कि *केले बचे कितने?"*

पत्नी ने जब हिसाब लगाया और सही-सलामत केलों की गिनती की तो निकले—चार। इतने में भिखारी ने आवाज लगाई, "बाबूजी, दे दो

कुछ भगवान् के नाम पर। तेरा बगीचा सदा हरा-भरा बना रहे।" मैंने खीजते हुए पत्नी से कहा, "यह भिखारी हमेशा अपने घर से खाली हाथ जाता है, पुण्य लूट लो इसको ये बचे हुए केले देकर। इतने केलों का अब हम भी क्या करेंगे।"

हमारे वार्तालाप को हमारा छोटा पुत्र सुन रहा था। वह जाने कितने दिनों से भिखारी को कुछ देने का सुख प्राप्त करना चाहता था। उसने इस परिस्थिति का लाभ उठाया। हम लोग अनिर्णय की स्थिति से उभर नहीं पाए थे, तब तक छोटा सपूत बचे हुए केले भिखारी को दे आया।

पत्नी ने झल्लाकर कहा, "इतने दिनों से केलों में पानी लगा रहे थे, अब अपने पास क्या बचा?" केले तोड़ते समय मेरे कपड़ों पर दाग पड़ गए थे, उनको दिखाते हुए पत्नी ने कहा, "केले के दाग, जो कभी नहीं छूटते, हम लोगों को 'कभी अपने केले थे' की याद सदैव दिलाते रहेंगे।"

दूसरे दिन मैंने अपनी पत्नी से कहा, "मेरा बॉस तो कब से मेरे केले खाने को उधार बैठा था। इस महीने तो मेरी सी० आर० भी लिखी जाएगी। उसको कम-से-कम दो दर्जन केले तो देने चाहिए थे।"

मेरी बात सुनते ही मेरी पत्नी को भी अपने बॉस याद आ गए। उनका तो ई० बी० (एफीसिएंशी बार) हटना था। हम सोचने लगे जैसे बॉसों को केले न देने पर अपना भविष्य अंधकारमय हो जाएगा। जब दूरदर्शी पत्नी ने याद दिलाया कि तुम भी तो अफसर हो। तुम्हारे चारों ओर भी चमचे घूमते रहते हैं। क्या उन्हें कुछ नहीं दोगे?" पर उस समय तो मुझे अपने मातहतों से अपना अफसर बलवान लग रहा था। इसलिए मैंने टालते हुए कहा—"अभी तो अपने बगीचे में अमरूद आने वाले हैं। उनसे तभी निपट लेंगे।"

काफी सोच-विचार के बाद यह निर्णय लिया गया कि हम लोग अपने-अपने बॉसों को बाजार से अच्छी क्वालिटी के दो-दो दर्जन केले लेकर उनके घर यह कहकर पहुंचा दें, "सर, ये हैं केले हमारे किचिन गार्डन के।"

# होली के बहाने षड्यंत्र

जब मैं नया-नया इस नगर में आया, तब मुझे कंपनी के लिए मित्रों की जरूरत महसूस हुई। सौभाग्यवश (बाद में पता चला कि वह मेरा दुर्भाग्य था) मेरा परिचय शुक्लाजी से हो गया। वह भी प्रातः टहलने जाते थे और मैं भी। रास्ते में ही मुलाकात हो गई। मुलाकात ने दोस्ती का रूप धारण कर लिया। शुक्लाजी कवि तो हैं ही, साथ ही कवि हृदय भी। अब आप स्वयं समझ सकते हैं कि जब वे कवि हैं तो कविता लिखने का शौक तो होगा ही। किन्तु मेरी बदकिस्मती यह है कि मेरे इन कवि मित्र को लिखने से अधिक सुनाने का शौक है और सुनाने से भी अधिक प्रशंसा सुनने का। वे जब भी मिलते, अपनी कविता सुनाने का प्रयत्न करते और मैं उससे बचने का। यह रस्साकशी हमेशा ही चलती रहती। इसी-लिए कविता सुनाने हेतु उन्हें एक षड्यंत्र रचना पड़ा।

सौभाग्य से कवियों के खिलने का मौसम वसंत भी आ गया और वसंत का रंग-बिरंगा त्योहार होली भी निकट थी। रंगीले मौसम के इस रंगीले त्योहार पर हमारी संस्कृति ने हमें दूसरों के साथ हंसी-मजाक करने का जो अधिकार दिया है, शुक्लाजी उसका व्यक्तिगत लाभ उठाने से न चूके। वे बोले, "सक्सेना जी, आजकल मेरी साली यहीं है। अब की होली खेलने मेरे घर चले आना।" साली का नाम आया तो मैं पुलकित हो गया।

आ गया एक दिन होली का भी। मैं शुक्लाजी के उस दिन वाले निमंत्रण पर विचार कर ही रहा था कि इतने में ही उनके कनिष्ठ पुत्र ने आकर मुझे बताया, "होली के उपलक्ष में शाम को पिताजी ने आपको

बुलाया है।"

शाम होते ही मैं गुलाल व रंग के अस्त्रों से सुसज्जित होकर पहुंच गया शुक्ला जी के दरवाजे पर। बेल बजाई, कुछ ही क्षणों में एक मोटी-सी महिला निकल आई। सहसा मेरे मुह से निकल गया, "माताजी ! क्या···" मैं बात पूरी भी न कर पाया था कि वे 'बैठिए' कहकर मुझे घूरती हुई अन्दर चली गई। उनकी तरेरी आखो से मुझे ऐसा आभास हुआ कि अवश्य ही मुझसे संबोधन मे गलती हो गई है। मुझे इसका अहसास भी हो गया। जब मैंने उन्ही महोदया के झुंझलाहट भरे शब्दों को डाइलॉग मे सुना। वे कह रही थी, "जीजाजी ! यह कौन खूसट आया है, जो मुझे माताजी कहता है ? क्या मैं माताजी दिखती हूं ?" शुक्ला जी कलाकार तो थे ही, असलियत जानते हुए भी बात सभाल ली। वे बोले, "आपको माताजी तो कोई मूर्ख ही कहेगा। तुम्हें गलतफहमी हुई है। शायद वे कुछ और कहना चाह रहे होगे।" इसके बाद मुझे दोनों की हंसी सुनाई दी। मुझे राहत मिली कि चलो शुक्ला जी ने मेरी इज्जत बचा ली। नही तो यह 'एक्सक्यूज' मुझे ही देना पड़ता।

जहां मुझे बैठाया गया था, वहां का माहौल बड़ा कलात्मक था। बैठने का प्रबन्ध जमीन पर ही किया गया था। फर्श पर बढ़िया दरी बिछी थी, उस पर सफेद चादरें। कमरों की दीवारो पर तुलसीदास, जयशंकर प्रसाद, सूर्यकांत त्रिपाठी, 'निराला', सुमित्रानदन पंत के बढ़िया फ्रेम मे जड़े हुए फोटो टंगे थे। एक अलमारी मे कई देवताओ के चित्र थे। वहीं कुछ अगर-बत्तियां जल रही थी, जिससे वातावरण बड़ा सुगन्धित तथा मोहक हो गया था। सबसे बड़ी बात, जिसने मुझे लुभाया यह थी कि किचन में से पकवानों की बढिया सुगन्ध आ रही थी। मैं मन-ही-मन खुश हो रहा था और अपने मन को तसल्ली दे रहा था कि यदि साली जी अच्छी नही तो क्या, नाश्ता तो अच्छा मिलेगा ही।

थोड़ी देर बाद दो-दो, तीन-तीन की टोली मे लोग आने लगे। मैं चकराया कि क्या सभी लोग सालीजी से होली खेलेंगे ? मैं ऐसा सोच ही रहा था कि अन्दर से शुक्लाजी खादी के सफेद कुर्ते, पाजामे में पान चबाते हुए प्रकट हुए। उन्होने सभी आगंतुकों का हाथ जोड़कर अभिनन्दन किया

और मेरी ओर मुखातिब होकर कहने लगे, "सक्सेनाजी, मैंने सोचा कि सब मित्रों को बुला रहा हूं तो क्यों न एक कवि गोष्ठी का आयोजन कर लिया जाए।" मैंने खिसियाते हुए कहा, "बड़ा अच्छा किया आपने। इस बहाने मेरा भी सबसे परिचय हो जाएगा।"

मैं शाम को छह बजे पहुंचा था। साढ़े सात बजे तक लोग आते रहे और एक-दूसरे का परिचय होता रहा। साढ़े सात बजे सबको एक-एक प्लेट में नाश्ता दिया गया। हर प्लेट में एक गुलाब जामुन, एक अदद बर्फी का और दो समोसे थे। सबको मजा आ गया और फिर आई ठंडाई। सब ने छककर ठंडाई पी।

आठ बजे तक नाश्ता चलता रहा। आठ बजे से कवि गोष्ठी का कार्यक्रम शुरू हुआ। लोगों ने आग्रहपूर्वक शुक्लाजी से ही निवेदन किया कि गोष्ठी का समारंभ उनकी कविता से ही हो। मैंने इस बात का जोरदार समर्थन किया। शुक्लाजी तो तैयार बैठे थे, कहने भर की देर थी कि वे रिकार्ड की तरह चालू हो गए। सारा कमरा वाह-वाह से गूंज उठा। प्रगतिवादी युग में उनकी रीतिकालीन कविता सुनकर मुझे तो खीझ आ रही थी, पर क्या करता, तारीफ करनी पड़ी, क्योंकि उनका बढ़िया नाश्ता कर चुका था। दूसरे, उनकी बातों से ऐसा लग रहा था कि अभी एक बार नाश्ता और मिलेगा।

शुक्लाजी के बाद अन्य कवियों ने अपनी रचनाएं सुनाईं। वाह-वाह की ट्रेंड से ऐसा प्रतीत हो रहा था कि प्रत्येक कवि अपने साथ कम से कम एक श्रोता अवश्य लाया है। वही उसकी कविता की तारीफ अधिक करता और 'पुन पुन' कहकर उनसे तीन-तीन बार तक कुछ पंक्तियों को सुनता। शेष लोग उसकी हां में हां मिलाते। भाग्य से उस महफिल में एक सुन्दर महिला भी बैठी थी। रंग गोरा था। पारदर्शी कपड़े उसकी सुन्दरता को द्विगुणित कर रहे थे। सुन्दर महिला को देखकर हृदय में आनन्द का जो संचार हो रहा था, उसके फलस्वरूप मेरी प्रफुल्ल भाव-मुद्रा को देखकर कवि महोदय उसे अपनी कविता की रसानुभूति का उद्रेक समझ रहे थे। परन्तु वास्तविकता का पता तो कोई भुक्तभोगी ही जान सकता है।

थोड़ी देर बाद पता चला कि सुन्दर महिला में भी कविता सुनाने का

दुर्गुण है। उन्होंने भी कविता सुनाई। मैं सोच रहा था कि काश, यह चुप रहती। कविता न सुनाती तो मेरे हृदय में उनके प्रति जो प्रेम व आदर जाग्रत हुआ था, वह नष्ट न होता। पर भगवान की इच्छा को कौन टाल सकता है? उक्त सुन्दरी की भावहीन अतुकांत कविता पर सबसे अधिक दाद मैंने ही दी।

लगभग दो घंटे बाद अपने स्वास्थ्य के हित में वहां से खिसक जाना ही उत्तम समझा। मैंने शुक्लाजी से अपनी इच्छा प्रकट की। शुक्लाजी के अतिरिक्त उस सुन्दरी ने भी बड़े आग्रह से मुझे रोका। मैं समझ गया कि सुन्दरी अपना श्रोता खोना नहीं चाहती। मैंने सिरदर्द का बहाना किया। तभी एक कवि ने तुरन्त अपनी जेब से एस्प्रो की दो गोलियां मेरे हाथ पर रखी और बोले, "यार, ये खाओ, अभी सिरदर्द भागता है।" कुढते-कुढते मैंने उन्हें धन्यवाद दिया। फिर पूछ बैठा, "क्या आप प्रैक्टिस करते हैं?" "कवि महोदय बोले, "नहीं यार। मैं तो बैंक में सर्विस करता हूं। किन्तु जब कभी किसी कवि गोष्ठी में जाता हूं तो एस्प्रो की कुछ टेब्लेट जरूर रखता ▮। पता नहीं, कब किसके सिर में दर्द शुरू हो जाए।" मजबूरन मुझे एस्प्रो खानी पड़ी और कविता सुननी पड़ी।

एक घंटे बाद मैंने फिर वहां से भागने का असफल प्रयत्न किया। मैं एकदम कमरे से बाहर आ गया। मेरे पीछे-पीछे शुक्लाजी भी बाहर आ गए और बोले, "कहां, यार?" मैंने कहा, "मुझे बाथरूम जाना है।" वे बोले, "अरे, बाहर क्यों जाते हो, इस काम के लिए? आप तो बड़े शर्मीले हैं। इसे अपना ही घर समझिए। आप अन्दर के बाथरूम में चले जाइए।" इतना कहकर उन्होंने जोर से आवाज लगाई, "कामिनी!" कामिनी का नाम उच्चारित होते ही मोटी साली बाहर आई। शुक्लाजी के कहने के अनुसार कामिनी मुझे बाथरूम तक ले गई। मैं सोचता रहा कि लगता है कि शुक्ला के सास-ससुर भी मजाकिया रहे होंगे, तभी तो मोटी इतनी और नाम कामिनी रखा गया है। मन में कुढन हो रही थी, क्योंकि बाथरूम से सीधे गोष्ठी तक कामिनीजी ने बॉडीगार्ड का काम किया।

रात को लगभग बारह बजे तक कविता सुनाने का कार्यक्रम चलता रहा। शुक्लाजी की ही कविता से गोष्ठी का समापन हुआ। मैं

हुआ, पर जैसे ही उठा शुक्लाजी ने रोक लिया और बोले, "अभी एक कप चाय और पीते जाइए।" उनका और अन्य लोगों का अनुरोध टाल न सका। मैंने भी सोचा कि चलो अच्छा है, इस बोरियत के बाद चाय से कुछ राहत मिल सकेगी।

यह मेरा पहला अवसर था जब मैंने किसी कवि गोष्ठी में भाग लिया था। मुझे क्या पता था कि कविताएं समाप्त होने के बाद गोष्ठी में एक और काम होता है। यह कार्यक्रम और भी बोरिंग था। इसमें सभी कवियों ने भाग लिया। कार्यक्रम था विपक्षी गुट के कवियों की आलोचना—जिसमें गाली-गलौज भी शामिल थी। इसके पश्चात शत्रु-पक्ष के प्रत्येक कवि की तुलना अपने गुट के कवि से की गई। स्वाभाविक है कि इसका उद्देश्य अपने गुट के कवि की श्रेष्ठता सिद्ध करना था। कोई कवि इसमें 'लूजर' नहीं था, क्योंकि वे एक-दूसरे की प्रशंसा कर अपने आभार का प्रदर्शन कर रहे थे।

इसके बाद संपादकों और प्रकाशकों को गालियां दी गईं। संपादकों पर यह आरोप लगाया कि वे अपनी पत्रिका में अपने गुट के कवियों की ही रचनाएं छापते हैं। हमारी अच्छी रचना भी बिना पढ़े वापस कर देते हैं। प्रकाशकों पर यह आरोप था कि समय पर तो क्या, बिल्कुल ही पैसे नहीं देते। पैसा मांगने भी जाओ तो चाय-नाश्ता कराकर अपनी असमर्थता व्यक्त कर खाली हाथ वापस कर देते हैं। उसके बाद कुछ कवियों ने सरकार की भी आलोचना की। उनका कहना था कि सरकार भी कुछ विशेष गुट के कवियों को ही आश्रय तथा पारितोषिक देती है।

अंतिम कार्यक्रम यह तय करना था कि अगली गोष्ठी कहां होगी और उसमें किस-किस कवि को बुलाया जाएगा। रात को लगभग दो बजे शुक्लाजी ने होली खेलने का कार्यक्रम रखा। सबने आपस के अतिरिक्त श्रीमती शुक्ल (भाभीजी) व कामिनी को गुलाल लगाया। यही कार्यक्रम सबसे अच्छा लगा मुझे, क्योंकि इसमें कामिनी के कपोलों को स्पर्श करने का सौभाग्य मिला। अभी तक मैं 'लूजर' ही था। ज्यादातर श्रोता कवि थे। मैं ही अभागा केवल श्रोता था।

लगभग ढाई बजे घर पहुंचा। बेल बजाई। पत्नी ने पहले लाइट

जलाई, पड़ी देखी, उसके बाद भन्नाते हुए दरवाजा खोला। छूटते ही बोली, "खेल आए सालीजों से होली ? यह कैसी होली थी जो रात के तीन बजे तक खेली जाती रही।"

मैंने अपनी सुरक्षा में कहा, "मैं एक बड़े षड्यंत्र का शिकार हूं। तुम्हें मेरे साथ सहानुभूति दिखानी चाहिए। होली का तो बहाना था, शुक्लाजी ने मुझे अपनी कविताएं सुनाने के लिए फांसा था।"

पत्नी ने मेरे ऊपर तरस खाते हुए बड़ी सौजन्यता से उत्तर दिया, "मैं पहले ही समझ रही थी कि यह आदमी अच्छा नहीं है। कुसंगति का एक-न-एक दिन तो प्रायश्चित करना ही पड़ता है।"

# एडमीशन

एक पत्रकार को लोगों ने सलाह दी कि जब उनको इसी व्यवसाय में रहना है, तब उन्हें जर्नलिज्म का कोई कोर्स कर लेना चाहिए। पत्रकार श्री शैलेंद्र को यह सलाह रास आई। अतः वे जर्नलिज्म के कोर्स की जुगाड़ लगाने लगे। एक दिन वे एक विश्वविद्यालय के पत्रकारिता विभाग में पहुंचे। उन्होंने देखा कि वहां जश्न मनाया जा रहा है और नारेबाजी हो रही है। शैलेन्द्र जी ने एक छात्र से अपनी जिज्ञासा प्रकट की, उसका उत्तर था, "हमने एजीटेशन करके एक स्टुडेंट का एडमीशन कराया है उसकी खुशियां मनाई जा रही हैं।"

शैलेन्द्र जी चौंके, "क्या एजीटेशन से एडमीशन होते हैं?"

"होते भी हैं और नहीं भी होते हैं।" छात्र ने मुस्कराते हुए उत्तर दिया।

"मतलब !"

"मतलब जानना चाहते हो, तो फुर्सत में मिलना। मैं सब बता दूंगा।" छात्र ने टालते हुए कहा।

"मैं आपसे कब मिलूं?" शैलेन्द्र जी ने पूछा।

"अरे, आप तो चिपक ही गए। क्या करेंगे यह सब जानकर?" शैलेंद्र जी ने विनमपूर्वक कहा।

"आपको कोई तकलीफ न हो, तो बता दीजिए।"

छात्र ने थोड़ी देर विचार किया। उसने ताड़ लिया कि यह कोई पत्रकार है। सोचा क्यों न शाम को इसी से चाय-पानी का इन्तजाम किया जाए। इसीलिए उसने कहा, "आप शाम को कॉफी-हाउस में मिलिए। वहां

कॉफी पीते जाएंगे और बता देंगे कि यह माजरा क्या है।"

शाम को शैलेन्द्र जी ने कॉफी-हाउस में बैठे-बैठे उक्त छात्र से काफी जानकारी प्राप्त कर ली। उसके बाद उन्होंने कुछ प्रोफेसरों और पत्रकारों से अतिरिक्त जानकारी प्राप्त की। जो घटित हुआ, उसका सार कुछ इस प्रकार है।

पिछले सत्र में सुरेश टण्डन नाम के एक छात्र का दाखिला पत्रकारिता विभाग में नहीं हुआ, यद्यपि वह मेरिट छात्र था। इससे उसे इतनी आत्म-ग्लानि हुई कि उसने आत्महत्या कर ली। यह खबर थोड़े-बहुत परिवर्तनों के साथ नगर के सभी समाचार-पत्रों में प्रकाशित हुई थी। प्रतिक्रियास्वरूप छात्रों ने बहुत हो-हल्ला किया। कई दिनों तक हड़ताल रही। कुछ दिनों बाद कुलपति महोदय ने छात्र-नेताओं को बातचीत के लिए आमंत्रित किया। छात्र नेताओं ने मांग की कि पत्रकारिता विभाग के अध्यक्ष को निलम्बित किया जाए। कुलपति ने आश्वासन दिया कि वे एक जांच समिति बिठा देंगे और उसके बाद ही कोई कार्रवाई करेंगे।

जांच समिति के गठन के बारे में कुलपति ने कुलसचिव से सलाह-मशवरा किया। कुलसचिव ने बताया "पत्रकारिता के विभागाध्यक्ष श्री रामदरश गृह-मन्त्री के भतीजे हैं। उन्हीं की सिफारिश पर उनकी नियुक्ति यहां हो सकी थी, यद्यपि वे सभी उम्मीदवारों में सबसे कम योग्य थे। सर, उसका बहुत 'पुश' है। उसको तो बचाना ही पड़ेगा।" कुलपति ने अपनी चिंता व्यक्त की कि इस मामले को फिर किस प्रकार निबटाया जाए। कुल-सचिव ने सलाह दी कि अपने विकास अधिकारी जांच करने में बहुत माहिर हैं। आप जांच समिति का अध्यक्ष उन्हीं को बना दीजिए। वे स्थिति को संभाल लेंगे।" कुलपति ने ऐसा ही किया।

यह वाकया अगस्त का था। विकास अधिकारी ने बिना कुछ किए-धरे फरवरी ला दिया। छात्र-नेताओं ने फिर शोर-शराबा किया और धरना धरने की धमकी दी। तब जांच समिति में कुछ हलचल हुई। कुछ बैठकें हुईं और कई लोगों से पूछताछ की गई। कुछ छात्र-नेताओं को, जिनकी उपस्थिति कम थी, को परीक्षा में बैठने की अनुमति दे दी गई, तो
हो गये। इस प्रकार अप्रैल आ गया और छात्र अपनी-अपनी

व्यस्त हो गये और यह प्रकरण विकास अधिकारी की फाइल मे बन्द हो गया।

विश्वविद्यालय का अगला सत्र जुलाई में शुरू हुआ। छात्र-नेताओं को अपने भाई-भतीजो के दाखिले अपने मनचाहे कोर्सेज में कराने थे। अतः उन्होंने इस प्रकरण को ब्लैकमेल करने के काम में इस्तेमाल किया। जुलाई मेकार्यकारिणी परिषद की बैठक में एक जागरूक और प्रभावशाली सदस्य श्री महीप सिंह ने कुलपति से यह जानना चाहा कि सुरेश टण्डन को आत्महत्या किए एक वर्ष होने वाला है, फिर भी इस प्रकरण की रिपोर्ट एग्ज़्युक्युटिव की मीटिंग में क्यो नही रखी गई। कुलपति ने कुलसचिव की ओर देखा। कुलसचिव ने इस प्रकरण मे देरी के कई कारण बताए, जैसे कुछ महीने कमेटी के अध्यक्ष अर्थात् विकास अधिकारी छुट्टी पर गये थे। उसके बाद उनका एक क्लर्क अपनी लड़की की शादी के लिए दो महीनो की छुट्टी लेकर चला गया था। अब पूरा प्रयत्न किया जाएगा कि 17 अगस्त (जिस दिन सुरेश टण्डन ने आत्महत्या की थी) से पहले जांच समिति की रिपोर्ट कार्यकारिणी परिषद के सामने पेश कर दी जाए।

जब श्री रामदरश को पता चला कि श्री महीप सिंह इस केस में रुचि ले रहे हैं, तो उन्हें चिंता हुई। उनकी चिंता के कई कारण थे। एक, अब उनके चाचा मंत्रिमंडल मे नही थे। दूसरे, श्री महीप सिंह स्कैंडल उजागर करने और दोषियो को सजा दिलाने में जग-प्रसिद्ध थे। यह बात नगर के समाचार-पत्रो में भी प्रकाशित हो गई कि इस केस में श्री महीप सिंह ने घोषणा की है कि वे 17 अगस्त से पहले दोषी को दंडित करवा कर ही दम लेंगे। इस खबर को पढ़कर श्री रामदरश ने भाग-दौड़ शुरू कर दी। सबसे पहले वे श्री महीप सिंह के घर गये।

महीप सिंह ने व्यंगात्मक मुस्कराहट के साथ पूछा, "कहिए, कैसे आना हुआ?"

"आप हमारे बॉस हैं। बस दर्शन करने चला आया।"

"फिर भी, डॉक्टर साहब, कुछ तो····" महीप सिंह ने पूछा।

"हे, हें, हें, मैं डॉक्टर नही हुआ जी।" रामदरश ने उत्तर दिया।

महीप सिंह जी ने फिर प्रश्न दागा, "क्यों, आप पी-एच० डी० कर

रहे थे ।"

"सर, पांच साल पूरे हो गये। पंजीयन रद्द हो गया । हैं, हे, हैं, आप तो साहब जानते हैं कि बाल-बच्चों मे कहा पढ़ाई हो पाती है ।" रामदरश जी ने घिघियाते हुए कहा ।

महीप सिंह ने अगला बाण छोड़ा, "आपकी शराब की दुकान का क्या लफड़ा चल रहा है ?"

"सर, आपको कैसे मालूम ?' रामदरश जी कुछ घबड़ाते हुए बोले ।

"क्यों, क्या हम शहर मे नही रहते ? हम से कौन-सी बात छुपी रहती है ?" महीपसिंह जी ने नेता-नुमा अन्दाज में कहा ।

"सर, वह दुकान तो मेरी पत्नी के नाम है और वहा मेरा भतीजा बैठता है। किसी ने शिकायत कर दी कि यह दुकान मैं स्वयं चलाता हूं और इन्कम-टैक्स रिटर्न मे इसको नही दिखाया है । सर, आप तो जानते हैं कि जब घर में कोई चीज है तो हाथ तो लगाना ही पड़ता है । कभी-कभी मैं भी बैठ जाता हूं । किसी ने जलकर रिपोर्ट कर दी ।"

महीप सिंह जी की उनके उत्तर मे कोई रुचि नही थी । अतः उन्होंने बात आगे बढ़ाते हुए कहा, "अच्छा, काम की बात कीजिए । कैसे आना हुआ ?"

"हैं, हे, हैं सर, आपका छोटा लडका तो बेकार है । उसको जर्नलिज्म का कोर्स क्यों नही करा देते ? मेरी तो पेपरो मे जान-पहचान है । सब अपने ही चेले हैं । सर, आप चाहेंगे, तो नौकरी भी लग जाएगी ।"

इस बात ने श्री महीप सिंह को पुनर्विचार करने के लिए मजबूर किया । वे भी अपने लडके की नालायकी से परेशान थे । उन्हें यह एक अच्छा ऑफर लगा । वे कुछ देर खामोश रहे और सोचते रहे । मन-ही-मन उन्होंने भी अंदाज लगा लिया कि रामदरश जी घाघ हैं और कुछ ले-देकर मामला निबटाना चाहते है ।

उन दोनों मे पुनः बातचीत शुरू हुई और दोनों मे यह समझौता हो गया कि महीप सिंह जी इस केस को अब 'परस्यू' नही करेंगे । इसके एवज मे रामदरश जी उनके नालायक लड़के को पत्रकारिता का कोर्स करा

पत्रकारिता विभाग में दाखिला लेने का विचार स्थगित कर दिया और इस 'स्टोरी' को ही अपने पेपर मे प्रकाशित कर विश्वविद्यालय राजनीति मे घुसपैठ शुरू कर दी।

वर्षों बाद आज स्थिति यह है कि पत्रकार शैलेन्द्र की सिफारिश पर विश्वविद्यालय के किसी भी कोर्स के लिए एडमीशन हो जाता है।

और बाद में किसी पेपर में चिपकवा भी देंगे।

महीप सिंह जी के ढीले पड़ जाने से विकास अधिकारी को अपनी रिपोर्ट तैयार करने में सुविधा हो गई। अंततोगत्वा रिपोर्ट तैयार हो गई।

जांच समिति ने जो तथ्य कार्यकारिणी परिषद के सामने रखे, वे इस प्रकार थे—

1. छात्रों का आरोप था कि पत्रकारिता विभाग में दाखिले योग्यता के आधार पर नहीं हुए। अतः सुरेश टंडन का दाखिला नहीं हो सका।

पाया गया कि पत्रकारिता विभाग में किसी का भी दाखिला योग्यता के आधार पर नहीं हुआ। अतः यह कहना कि केवल सुरेश टंडन के साथ अत्याचार हुआ, तर्कसंगत नहीं है।

2. कुल 50 सीटें हैं। 20 सीटें अनुसूचित जातियों, जनजातियों आदि के छात्रों के लिए आरक्षित हैं। कुछ स्थानीय विधायकों और मंत्रियों के बीच बंट जाती हैं। कुछ विश्वविद्यालय के अधिकारियों के रिश्तेदारों को भी देनी पड़ती हैं। कभी-कभी 2-4 सीटें मेरिट वाले छात्रों को भी मिल जाती हैं।

3. आज के माहौल में किसी राजनेता या विश्वविद्यालय के अधिकारी की बात टाल पाना किसी भी विभागाध्यक्ष के लिए संभव नहीं है। अतः इस बात के लिए केवल श्री रारदरश जी को ही दोषी ठहराना ठीक न होगा।

4. सुरेश टण्डन के साथ ज्यादती हुई थी। चूंकि वह मर चुका है, अतः उसका दाखिला नहीं हो सकता। अतः इसकी क्षतिपूर्ति करने की दृष्टि से उसके छोटे भाई रमेश टण्डन को, जो तीन वर्षों के परिश्रम के बाद बी० ए० तृतीय श्रेणी में पास हो गया है, पत्रकारिता विभाग में दाखिला दे दिया जाए।

इस रिपोर्ट के आधार पर रमेश टण्डन का दाखिला हो गया। छात्र-नेता इसे अपनी जीत मानते हैं। अतः वे जश्न मना रहे थे।

पत्रकार शैलेन्द्र यह सत्यकथा सुनकर चकराए उन्हें लगने लगा कि ऐसे हालात में तो उनका दाखिला भी टेढ़ी खीर ही होगा। अतः उन्होंने

पत्रकारिता विभाग में दाखिला लेने का विचार स्थगित कर दिया और इस 'स्टोरी' को ही अपने पेपर मे प्रकाशित कर विश्वविद्यालय राजनीति में घुसपैठ शुरू कर दी।

वर्षों बाद आज स्थिति यह है कि पत्रकार शैलेन्द्र की सिफारिश पर विश्वविद्यालय के किसी भी कोर्स के लिए एडमीशन हो जाता है।

## लेडीज क्लब में बाल-वर्ष

हर जन जानता है कि विदेशों में भारत का प्रतिनिधित्व करने के लिए अंग्रेजी का ज्ञान अनिवार्य है, चाहे आपको देशी भाषा आती हो या न आती हो। जिस प्रकार आप पर विद्वान होने का ठप्पा तभी लगेगा जब आप पश्चिम की विशेषतया संयुक्त राज्य अमेरिका की यात्रा कर आये हों, चाहे आपने अपने देश का ताजमहल कभी न देखा हो। इसी परम्परा में हमारे समाज मे भारतीय संस्कृति को उजागर करने का काम हमारे देश के पश्चिमीकृत क्लबों को है। इसी प्रकार का एक क्लब हमारे नगर में है, जिसका उद्‌घाटन अन्तर्राष्ट्रीय महिला वर्ष में राज्य की तत्कालीन महिला मन्त्री ने किया था। उस वर्ष क्लब में काफी गहमागहमी रही। उसके दूसरे वर्ष क्लब ठंडा पड़ा रहा, मानो पिछले वर्ष के कठिन परिश्रम के बाद आराम कर रहा हो। तीन वर्षों के अन्तराल के बाद अन्तर्राष्ट्रीय बाल-वर्ष आ गया। लेडीज क्लब की महिलाओं को लगा, मानो बिल्ली के भाग्य से छींका टूट गया हो। हर्ष का कारण स्वाभाविक था। कई महिलाओं की प्रतिभा को मुखरित होने का अवसर मिलेगा और वर्ष भर कुछ-न-कुछ करने से बोरियत से छुटकारा मिलेगा। बाल-वर्ष के आरम्भ होने के पूर्व ही योजनायें बनने लगी और उनके क्रियान्वयन पर चर्चायें होने लगी।

दिसंबर 1978 से ही बाल-वर्ष के कारण लेडीज क्लब में चहल-पहल होने लगी। सबसे पहले प्रश्न यह उठा कि अगले वर्ष के लिए क्लब की अध्यक्षा कौन हो। पिछले सभी चुनाव सर्वसम्मति से हुए थे। अतः इस बात का प्रयत्न होने लगा कि इस वर्ष भी चुनाव सर्वसम्मति से हो। इस पद के लिए कई महिलाओं के नाम सुझाये गये। अंत में केवल दो महिलाओं

के नामों की चर्चा शेष रह गई । एक थी श्रीमती स्वामीनाथन और दूसरा थी श्रीमती सुशीला टंडन । प्रथम के पक्ष में ये तर्क दोहराये गये—वे मिलिटरी के एक बड़े अफसर की पत्नी हैं । उनके पास जरूरत से ज्यादा पैसा है । उनके बच्चे भी बड़े हो गये हैं। अतः वे अपना अधिक-से-अधिक समय क्लब को दे सकती हैं और समय आने पर धन से भी सहायता कर सकेंगी । श्रीमती टंडन के पक्ष में ये तर्क थे—वे बहुत ही सुन्दर और आकर्षक महिला है। उनका व्यक्तित्व बड़ा प्रभावशाली है । विभिन्न कार्य-क्रमों के लिए चंदा जुटाने में उनका कोई सानी नहीं है । श्रीमती भट्टाचार्य का श्रीमती टंडन के पक्ष मे एक तर्क यह भी था, "मिसेज टंडन कितना अच्छा कॉन्वेन्टी हिन्दी बोलता है । इसलिए हिन्दी क्षेत्र में यह मिसेज स्वामीनाथन से बेटर रहेगा।" कई दिनों के बहस के बाद श्रीमती टंडन को लेडीज क्लब की अध्यक्षा चुन लिया गया । इसके साथ ही श्रीमती विश्वास को क्लब का सेक्रेटरी तथा श्रीमती अग्रवाल को कोषाध्यक्ष चुना गया । जनवरी 1979 मे इन सबने अपने-अपने पद का कार्यभार संभाल लिया ।

7 जनवरी 1979 को लेडीज क्लब की जनरल बॉडी की मीटिंग श्रीमती टंडन की अध्यक्षता में हुई । मीटिंग में सेक्रेटरी ने यह प्रस्ताव रखा कि इस नगर के अफसरों की पत्नियों को क्लब का ऑनरेरी सदस्य बना लिया जाये, जिससे उनके पतियों द्वारा क्लब को कुछ सुविधाएं मुफ्त मिल सकें । यह प्रस्ताव निर्विरोध पास कर दिया गया। तदनुसार 21 गणमान्य महिलाओं को ऑनरेरी सदस्यता प्रदान की गई । दूसरा प्रस्ताव श्रीमती गुप्ता का था, "जब हम लोग समाज सेवा के लिए घर के बाहर आते हैं, तो हमारे बच्चे या तो अकेले घर पर रह जाते हैं, या उनको अपढ़ नौकरों या दादा-दादियों के पास रहना पड़ता है । इससे उनमें मैनर्स नहीं आ पाते । दूसरे, हम कल्चर्ड लोगों के बच्चों के लिए इस एरिया में कोई अच्छा स्कूल भी नहीं है । कितना अच्छा हो कि हमारा क्लब एक पालना-गृह व एक बाल-बाड़ी चलाये, जिसमें अच्छी टीचर्स रखी जायें ।" इस प्रस्ताव को भी सबने सहर्ष स्वीकार कर लिया । इसके बाद श्रीमती पंत ने कहा, "मेरी एक छोटी बहिन है जो एम० ए०, बी० एड० है । वह इस बालबाड़ी को संभाल

लेगी।" इस पर श्रीमती रंगनायक ने एतराज किया। उनका कहना था, "मेरी डॉटर ने बी० एड० इंग्लिश मीडियम से किया है। उसको बाल-वाडी का इंचार्ज बनाया जाये। तभी हम लोगों के बच्चे ठीक से इंगलिश बोलना सीख सकेंगे। नहीं तो इस बालवाडी और म्युनिसिपल स्कूल में अन्तर ही क्या रहेगा।" इस कथन के बाद दोनों पक्षों के लोगों में तू-तू मैं-मैं हो गई। श्रीमती कुलकर्णी अपने पड़ोस में बैठी महिलाओं से कह रही थी, "श्रीमती पंत का हस्बैंड पुलिस सुपरिंटेंडेंट होगा अपने घर के लिए। यहां उसका पुलिसपना नहीं चलेगा। कैसे रुतबे से कहती है कि मेरी बहिन इंचार्ज रहेगी, एम० ए० हिन्दी कोई क्वालिफिकेशन है। कोई भी ऐरा-गैरा कर लेता है। वह बच्चों को क्या मैनर्स सिखायेगी। साड़ी तक तो ठीक से पहन नहीं पाती।" जब यह कहा जा रहा था, पीछे श्रीमती रेड्डी कुछ महिलाओं को बता रही थी, "अपनी बहन की शादी करती नहीं। थर्टी-ईयर्स का हो गया। मैं तो इसके पड़ोस में रहता। मिस्टर पंत का अपनी सिस्टर-इन-लॉ से कुछ गडबड़ है।" पीछे ही श्रीमती जोशी ने अपने ग्रुप वालों से कहना शुरू किया, "मिसेज रंगनायन खुद तो पहले इंग्लिश बोल ले। 'टाक्ट' को 'टाक्ड' कहती है। इसकी लड़की भी ऐसा ही इंगलिश बोलती होगी। अभी इसके हस्बैंड ने कार क्या ले ली है कि इसका दिमाग सड गया है।" इस पर श्रीमती वर्मा ने कहा, "बड़ी कार वाली बनती है। वह तो सेठ गुलाब चन्द इन्कमटैक्स की रेड मे फंस गया था, उसी ने कार प्रिजेंट कर दी है।"

इस प्रकार की छींटाकशी और कानाफूसी ने बड़ा विकट रूप धारण कर लिया। लगता था कि भारत की ससद का अधिवेशन चल रहा हो। मारपीट की नौबत आने लगी, तभी अध्यक्षा महोदय ने स्थिति को संभालने की गरज से घोषणा की कि सभा की कार्रवाई एक [illegible] लए स्थगित की जाती है। साथ ही, उन्होंने सभी महिलाओं [illegible] पड़ोस वाले कमरे में पहुंचने का निमन्त्रण भी दिया। [illegible] को पड़ोस के कमरे में शीघ्र पहुंचने की चिन्ता हो [illegible] मुद्दों को भूलने लगीं। गरम-गरम समोसों और पकौ[illegible] गुस्सा भी ठंडा कर दिया। वे योद्धाओं की तरह सम[illegible]

टूट पड़ीं। एक घंटे तक खाने-पीने तथा उसके साथ गप्पों का कार्यक्रम चलता रहा। तब तक भद्र महिलाओं के सचेत पतियों ने अपनी पत्नियों को लेने के लिए गाड़ियां भेज दी। इन गाड़ियों में अधिकतर सरकारी थीं। कुछ महिलाओं ने तो खा-पीकर अपने घर का रास्ता नापा। कुछ सजग महिलाओं ने अपने सरकारी ड्राइवरों को यह कहकर रवाना कर दिया कि वे दस बजे बाद आयें, क्लब की महत्वपूर्ण बैठक चल रही है।

नौ बजे पुनः बैठक आरंभ हुई। अब सदस्याओं की संख्या आधे से कम रह गई। अतः प्रस्ताव शीघ्रता से पारित होने लगे। अध्यक्षा ने बताया। "हम सब लोग इस बात से सहमत हैं कि हमारे शहर में एक बालबाड़ी हो। बालवाड़ी के लिए सरकारी मदद लेने का प्रयत्न किया जायेगा। इसका इंचार्ज कौन हो, यह बाद मे एक कमेटी द्वारा तय किया जायगा। इस पर बहस करना अनुपयोगी है। अब दूसरा मुद्दा यह उठा कि गणतन्त्र के दिन हमारे क्लब के इस वर्ष के कार्यक्रमों का उद्घाटन किससे करवाया जाये।" किसी ने सुझाव दिया, "कलेक्टर साहब से उद्घाटन कराया जाये।" पर यह सुझाव यह कहकर अमान्य कर दिया। कि इस क्लब की सदस्याओ के पतियो से उद्घाटन न कराया जाये, ऐसी परम्परा हम लोग रखना चाहते हैं।" इसके बाद कुछ नेताओ व समाज-सेवको के नाम सुझाये गये। इनमें एक नाम सेठ बालचन्द का भी था। कुछ महिलाओं ने सेठ जी के नाम का विरोध इस आधार पर किया कि वे बदनाम हैं क्योकि पत्नी के मरने के बाद उन्होने अपनी साली को रख लिया है। सेठ के पक्ष मे अग्रलिखित विचार रखे गये। वे चन्दा उदारता से देते है। उनकी इस आदत से हमारा क्लब काफी लाभान्वित हो सकता है। दूसरे, वे सत्ता पार्टी के एक अच्छे नेता है। जब भी कोई मंत्री इस नगर मे आता है, वह सेठ जी का व्यक्तिगत मेहमान बनकर रहता है। वे एक प्रसिद्ध समाज-सेवक हैं। जब से उनकी पत्नी का स्वर्गवास हुआ है, उन्होने अपना तन-मन-धन समाज-सेवा मे अर्पित कर दिया है। समाज-सेवा मे भी वे स्त्रियो के उत्थान के लिए काफी प्रयत्नशील रहते है। उनकी कृपा से इस नगर मे एक विधवा आश्रम खुला है जहा साल भर सास्कृतिक कार्यक्रम होते रहते है। उन्होंने इस नगर मे कई कन्या विद्यालय खुलवाये हैं जिससे कई जरूरत-

मन्द स्त्रियों को रोजगार मिला है। अंत में यही तय हुआ कि श्रीमती टंडन व श्रीमती विश्वास श्री बालचन्दजी से निवेदन करने जायें कि 26 जनवरी को उद्घाटन उन्हीं के करकमलों द्वारा होगा।

दूसरे दिन सुबह 10 बजे श्रीमती टंडन और श्रीमती विश्वास सेठ मूलचन्द के पुत्र सेठ बालचन्द के पास पहुंची। सेठ बालचन्द अपनी गद्दी पर बैठे तम्बाकू खा रहे थे। जब उन्होंने दो सुन्दर महिलाओं को अपने पास आते देखा, तो बड़ी प्रसन्न मुद्रा में उनका स्वागत किया और उनके आने का प्रयोजन पूछा। श्रीमती टंडन ने अपनी साड़ी का पल्लू ठीक करते हुए और चेहरे पर मुस्कान लाते हुए सेठ को बताया, "इस वर्ष हम लोग अपने लेडीज क्लब में बाल वर्ष मनाना चाहते हैं।" सेठजी, "हां, हां, क्यों नहीं, पर मेरे तो पिताजी जीवित हैं। मैं तो अभी नया-नया समाज-सेवा के क्षेत्र में आया हूं। मेरे पिता तो कई दशकों से समाज-सेवा में लगे हुए हैं। आप लोग उनका वर्ष मनायें, तो अधिक अच्छा रहेगा।" कुछ रुककर वे बोले, "वैसे इसके लिए आपको जितना धन चाहिए, मैं दे दूंगा।"

सेठजी की बात सुनकर दोनों महिलायें हक्की-बक्की रह गईं। पहले तो वे समझ नहीं पाईं कि सेठजी क्या कह रहे हैं। थोड़ा दिमाग पर जोर देने के बाद श्रीमती विश्वास भांप गईं कि सेठजी का नाम बालचन्द है, अतः वे अपना वर्ष मनाये जाने की बात समझ रहे हैं। अतः बात को स्पष्ट करते हुए बड़ी नम्रता से कहा, "भइयाजी, हमारा मतलब (सकुचाते हुए) बाल का मतलब'''आपके नाम से नहीं है।"

सेठजी—"अच्छा, अच्छा (खिसियानी हंसी हंसते हुए) मैं भी तो मजाक कर रहा था।

मैं क्या इतना बुद्धू हूं कि इतना भी न समझ सकूं कि लेडीज क्लब मेरा वर्ष क्यों मनाये। महिलाओं को तो बाल प्रिय होते हैं। वैसे बाल मुझे भी अच्छे लगते हैं। (अपने सिर पर हाथ फिराते हुए) पर भगवान की इच्छा है कि अपने बाल ही नहीं हैं। फिर भी आपका क्लब यह बहुत अच्छा काम कर रहा है। कम-से-कम लोगों का ध्यान तो बालों के प्रति आकर्षित होगा। और देखिए, अप्रत्यक्ष रूप से हमारा भी फायदा है। हमारी कंपनी ने बाल बढ़ाने वालों की रक्षा के लिए 'बाल रक्षा तेल' निकाला है। आप

आज्ञा दे तो कुछ सैंपल क्लब में भिजवा दें।"

श्रीमती टंडन अपनी हंसी नहीं रोक पा रहीं थी। अत. वे थूकने के बहाने दूकान के बाहर चली गईं। श्रीमती विश्वास ने स्पष्टीकरण किया, "भैया जी ! यह अन्तर्राष्ट्रीय बाल वर्ष है। इस वर्ष सारे संसार के लोग अपने बच्चो की उन्नति के लिए कार्यक्रम बनायेंगे। हमारा क्लब भी इस दिशा में कुछ करना चाहता है।"

यह सुनकर सेठजी विशुद्ध रूप से हंसते रहे। इस हंसी में उन्होने अपनी अज्ञानता को छुपाना चाहा। फिर अपनी अहमियत जताने की गरज से कहने लगे, "यह तो बताइये कि यह बाल-वर्ष कब आ गया। हमे तो पता ही नही चला, नही तो अपने विधवा आश्रम में बाल-वर्ष धूमधाम से मनवा देते।"

श्रीमती टंडन ने बात को आगे बढ़ाते हुए कहा, "भइया जी, आप तो सदैव ही बच्चों की उन्नति के लिए कुछ-न-कुछ करते ही रहते है।"

सेठजी अपनी प्रशंसा से प्रसन्न होते हुए बोले, "क्यों नही, क्यों नही ! मैं तो हमेशा अपने नालायक बेटे रमेश के बारे मे सोचता रहता हूं। आठवीं में दो बार फेल हो चुका है। इस साल तो दो-दो ट्यूशन भी लगा दी हैं। जब से उसकी मां मरी है, बडा दुःखी-सा रहता है। उसी की वजह से तो मैंने उसकी मौसी को यहां बुला लिया है। खैर, यह तो अपनी रही। हर व्यक्ति को अपने बच्चो के भविष्य के बारे में सचेत रहना चाहिए।"

"भइया जी, आप ठीक कहते हैं। हमारा क्लब भी यही चाहता है कि हम गरीब बच्चों के लिए कुछ करें।" श्रीमती विश्वास ने कहा।

सेठजी ने अपनी मूछो पर हाथ फिराते हुए कहा, "क्यो नही, क्यो नही, गरीब बच्चों की मदद करना तो अपने कुल की परम्परा है। अपनी कामवाली का आठ साल का लड़का हमने अपने कारखाने में लगा रखा है। वैसे हम क्या करें सरकार ही कुछ नही करने देती। कानून बना रखा है कि बच्चों को कारखाने मे नौकर नही रखा जा सकता। वह तो हमने परोपकार की भावना से बिना लिखा-पढ़ी के उसे लगा रखा है।"

श्रीमती टंडन ने मक्खन लगाया, "भइया जी, आपकी दयालुता का तो इस नगर का बच्चा-बच्चा ऋणी है।"

"कहिए बहिन जी, कितने का चेक कटवा दूं आपके कार्यक्रम के लिए।"

"भइया जी ! पैसों की कोई खास बात नहीं है। हम लोग चाहते हैं कि आप हमारे क्लब में अन्तर्राष्ट्रीय बाल-वर्ष का उद्घाटन करें और कुछ रुपये सरकार से दिलवा दें।"

"बहिनजी, आप जब कहेंगी, उद्घाटन कर देंगे। बस, आप एक दिन पहले फोन पर बता देना।"

सेठजी की प्रसन्न मुद्रा देखकर श्रीमती टंडन का साहस हुआ कि वे उंगली पकड़कर बाजू पकड़ें। वे बोलीं, "भइयाजी, शहर में क्या, आजकल तो कस्बों में भी बाल बाड़ियां और किंडरगार्टन चल रहे हैं। हमारा क्लब एक बालबाड़ी और एक किंडरगार्टन अपने नगर में खोलना चाहता है। उसके लिए आप कुछ रुपये सरकार से दिलवा देना।"

सेठजी ने एक बड़ी-सी जमुहाई ली और फिर बोले, "सरकार से रुपये दिलवाना कौन बड़ी बात है। जब जरूरत हो बता देना। रही बात स्कूल चलाने की, यह भी हम अपने जिम्मे लेते हैं। पिछले वर्ष मेरी साली ने बी० एड० कर लिया है। आजकल घर पर खाली बैठी रहती है। उसको ही इसका इंचार्ज बना देंगे। उसका भी मन लग जायेगा।"

श्रीमती टंडन ने टालने के मूड में कहा, "अच्छा, आप 26 जनवरी को बाल-वर्ष का उद्घाटन कर दीजिए। बाकी बातों पर फिर कभी आकर आप से राय ले लेंगे। अच्छा तो हम चलते हैं।"

"बहिनजी, कुछ चाय-वाय लीजिए।"

"नहीं, भइया जी, धन्यवाद। अभी चलते हैं। बहुत काम है। चाय फिर कभी ले लेंगे।" श्रीमती विश्वास ने कहा।

"जैसी आपकी मर्जी।"

वे दोनों वहां से उठ ली। रास्ते में श्रीमती टंडन ने श्रीमती विश्वास से कहा, "क्लब में हम लोग बेकार में ही इस बात पर बहस कर रहे थे कि स्कूल का इंचार्ज कौन हो। अब तो सेठजी की साली को ही इंचार्ज बनाना पड़ेगा।"

श्रीमती विश्वास ने कहा, "अरे, वह सेठजी की साली है क्या? उसे

उसकी पत्नी समझो। बस भावरें ही नही पड़ी हैं।"

26 जनवरी को लेडीज क्लब की ओर से बाल-वर्ष के उपलक्ष्य मे एक बाल मेले का आयोजन किया गया। इस मेले मे क्लब की सदस्याओ के बच्चो ने अपने-अपने स्टाल लगाए। इस बाल मेले मे प्रवेश शुल्क 11 रुपये रखा गया। प्रचार यह किया गया कि लागत निकलने के बाद इस मेले से जो आमदनी होगी, उसका पूरा पैसा बच्चों की भलाई के लिए खर्च किया जाएगा। दिन भर मेले मे चहल-पहल रही। शाम को सात बजे क्लब की सदस्याओं और आमंत्रित भद्रजनो के बीच अध्यक्षा श्रीमती टंडन के स्वागत भाषण के बाद सेठ बालचंद जी का जोरदार भाषण हुआ। भाषण मे उन्होने ससार के सभी बच्चो के प्रति समाज की जिम्मेदारी पर प्रकाश डाला। अंत में उन्होने तीन घोषणाए की। प्रथम, इस नगर मे एक बालबाड़ी और एक किंडरगार्टन स्कूल खोला जाएगा। दूसरे, इन दोनों की इ चार्ज कुमारी रंजना सेठ (सेठ जी की साली) रहेगी। तीसरे, वे इसके लिए दस हजार रुपए का अनुदान देंगे। उन्होंने यह भी आश्वासन दिया कि वे सरकार से भी अनुदान दिलवा देंगे।

10 फरवरी को शाम छह बजे क्लब की जनरल बॉडी की मीटिंग हुई। प्रथम, अध्यक्षा श्रीमती टंडन ने 26 जनवरी के कार्यक्रम की प्रशंसा की और भविष्य के कार्यक्रमों की रूपरेखा प्रस्तुत की। इसके बाद कोषाध्यक्ष श्रीमती अग्रवाल ने बताया, "बाल मेला मे टिकटो की बिक्री तथा स्टालो के किराए से 2 हजार रुपयो की आमदनी हुई है। स्टाल लगाने का व्यय, लाइट व सजावट और अतिथियो के जलपान आदि मे दो हजार सौ रुपये खर्च हुए। इस प्रकार एक सौ रुपये का घाटा हुआ, जिसे क्लब वहन करेगा। इस पर कुछ सदस्यों ने टीका-टिप्पणी की कि घाटा क्यों हुआ। सेक्रेटरी ने यह कहकर लोगों को शात किया कि अच्छे क्लबो को अपनी प्रतिष्ठा बनाए रखने के लिए सजावट व आतिथ्य-सत्कार मे व्यय तो करना ही पड़ता है। मीटिंग मे यह भी निर्णय हो गया कि अगली जुलाई से क्लब एक बालवाड़ी व एक किंडरगार्टन चलाएगा। दूसरे, अप्रैल के महीने में क्लब का एक शिष्टमंडल श्रीमती टंडन की ... कलकत्ता, बंबई और दिल्ली का दौरा करेगा। यह मंडल यह ...

करेगा कि इन नगरो में बच्चो के विकास के लिए क्या-क्या हो रहा है और इनमे से किन योजनाओ को अपने यहां लागू किया जा सकता है। चूंकि श्रीमती टंडन की जून में डिलीवरी होने वाली थी, अतः अगस्त मे जाने का निश्चय किया गया।

5 जून को श्रीमती टंडन ने एक पुत्र-रत्न को जन्म दिया। पुरानी पीढ़ी के लोगों ने खुशी के कारण घर सिर पर उठा लिया था, क्योंकि उनके इकलौते पुत्र का प्रथम पुत्र कुल-दीपक के रूप में आया था। इसकी धूमधाम पूरे मुहल्ले मे एक सप्ताह तक रही। श्रीमती टंडन ने अपने पुत्र को स्तनपान नही कराया। बच्चा दादी व आया के ऊपर छोड दिया गया।

25 अगस्त को चार महिलाओं का एक शिष्ट मंडल श्रीमती टंडन की अध्यक्षता मे पहले बंबई, फिर कलकत्ता और बाद मे दिल्ली के लिए रवाना हो गया। शिष्ट मंडल अपने अनुभवो के साथ 1 अक्तूबर को नगर मे वापस आ गया। क्योकि 2 अक्तूबर को शिष्ट मंडल के स्वागत तथा अन्य कार्यक्रमों के लिए एक वृहत आयोजन किया गया था। श्रीमती टंडन की अनुपस्थिति में उनके पुत्र का देहात हो चुका था। उनके घर मे कोहराम मचा हुआ था। उन्होने प्रयत्न किया कि यह कार्यक्रम स्थगित कर दिया जाए। पर ऐसा न हो सका क्योकि कार्यक्रम की घोषणा बहुत पहले की जा चुकी थी। इसमे नगर के गणमान्य व्यक्ति ही नही, सेठ बालचंद के आग्रह पर राज्य की शिक्षा मंत्री भी पधार रह थी। क्लब की प्रतिष्ठा का प्रश्न था।

1979 की 2 अक्तूबर। आज लेडीज क्लब मे बहुत चहल-पहल थी। क्लब की बिल्डिंग को इतना अधिक सजाया गया था कि मानो किसी राजा-महाराजा के यहा विवाह का कार्यक्रम हो। राज्य की शिक्षा मंत्री मुख्य अतिथि थी और सेठ बालचंद अध्यक्ष। निर्धारित समय के एक घटे बाद कार्यक्रम आरंभ हुआ। सबसे पहले सेठ बालचंद का स्वागत भाषण हुआ, जिसमें उन्होने अपनी तथा शिक्षा मंत्री की प्रशंसा की। कुछ शब्द क्लब के बारे में भी थे। उसके बाद क्लब की सेक्रेटरी ने अपने क्लब तथा उसके विभिन्न कार्यक्रमों से मुख्य अतिथि व आमंत्रित श्रोताओ को अवगत

कराया। सेक्रेटरी श्रीमती विश्वास ने शिष्टमंडल, जिसकी वे स्वयं सदस्या थी, की उपलब्धियो पर भी प्रकाश डाला। उन्होने यह भी कहा, "हमारे क्लब को श्रीमती टंडन जैसी कर्मठ अध्यक्षा पर गर्व है। इस देश की परंपरा रही है कि समाज की खातिर अपने बच्चे का उत्सर्ग भी हो जाए तो कम है। पन्ना दाई का उदाहरण हमारे समक्ष है। श्रीमती टंडन का त्याग पन्ना दाई से कम नही। उन्होने भी अपने नवजात शिशु की चिंता न करते हुए क्लब की ओर से समाज के बच्चो के कल्याण के लिए विभिन्न नगरो में होने वाले विकास कार्यक्रमों का अध्ययन किया, जिससे हमारे नगर के बच्चों को लाभ पहुंच सकेगा। इस क्लब की सभी महिलाए देश के बच्चों के भविष्य के लिए चिंतित है। उनके कल्याण के लिए वे क्लब में बैठकर विभिन्न प्रकार की योजनाए बनाती है। ऐसे अवसरो पर हम लोगो को अपने बच्चों को घर पर अकेले छोड़ कर आना पड़ता है, जिससे हम देश-व्यापी स्तर पर बच्चो के कल्याण के लिए कुछ कर सकें। जिस देश मे ऐसी जागरुक महिलाएं हों, उस देश के बच्चों का भविष्य क्यों न उज्ज्वल होगा।"

इस वाक्य के समाप्त होते ही पूरे नगर की लाइट गुल हो गई। अंधेरे में एक प्रबुद्ध श्रोता की आवाज सुनाई दी, "बिजली बच्चो के उज्ज्वल भविष्य पर उपहास कर रही है।"

# नारदजी का भारत सर्वेक्षण

एक महानगर के एक भव्य मंदिर के प्रांगण में धर्मावलंबियों का एक सम्मेलन हो रहा था। सम्मेलन में गीता की ये पंक्तियां 'यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति-भारत। अभ्युत्थानमधर्मस्य तदाऽऽत्मानं सृजाम्यहम्॥' उद्धरित करते हुए ये विचार व्यक्त किये गये कि इस समय धर्म की बहुत हानि हो रही है। अतः भगवान को अवतार ले लेना चाहिए। वैसे भी कलियुग में भगवान का जन्म लेना 'ड्यू' है। निर्णय लिया गया कि एक प्रतिनिधि मंडल भगवान से मिले और उन्हें विश्वास दिलाये कि उनके अवतार लेने का समय आ गया है।

एक पांच सदस्यीय प्रतिनिधि मंडल भगवान के पास भेजा गया। सदस्यों ने भगवान को बताया, "देश में अधर्म का बोलबाला है। रोज कत्ल और बलात्कार की हजारों घटनाएं होती हैं। भ्रष्टाचार और व्यभिचार बहुत बढ़ गया है। भाई-भाई में प्रेम नहीं रहा। बच्चे अपने मां-बाप व गुरुजनों का कहना नहीं मानते। स्थिति तो यह है कि यदि आज द्रोणाचार्य एकलव्य से अंगूठा मांगें, तो वह अंगूठा दिखायेगा। यदि कोई दशरथ एक से अधिक विवाह करता है, तो वे विवाह गैरकानूनी घोषित कर दिये जाते हैं। पत्नियों ने पतिव्रत धर्म छोड़ दिया है। राम सीता को वन-गमन तो क्या, यदि मायके भी भेजता है तो वह कोर्ट से स्टे ऑर्डर ले आती है। यदि एकाध स्त्री सती होना भी चाहे तो उसे सरकार सती भी नहीं होने देती।"

भगवान ने सदस्यों की बातें ध्यान से सुनीं। अंत में उन्होंने सदस्यों को आश्वासन दिया कि वे शीघ्र ही नारद को भेज कर यह पता लगायेंगे

कि भारत में इस प्रकार की आपातस्थिति है या नही। तभी वे कुछ निर्णय ले सकेंगे।"

एक सदस्य ने हिम्मत बटोर कर कहा, "भगवन्! 'भगवान भगत के बस में होते आये' के फार्मूले के अनुसार आपको हम भक्तों की बात मान लेनी चाहिए! वैसे भी भगवान, आप खाली ही तो हैं, जन्म ले क्यो नही लेते ?"

भगवान को इस सदस्य की धृष्टता पर बहुत क्रोध आया। किन्तु प्रतिनिधि मंडल के सामने अपना गुस्सा पीना ही श्रेयस्कर समझा। उन्होंने विनम्र स्वर मे कहा, "वत्स! ब्रह्माड मे पृथ्वी जैसे लाखों लोक है। हमें सबकी मांगें पूरी करनी पड़ती हैं। तुम्हे हम खाली दिखाई देते हैं ?"

वह सदस्य सहम गया और उसने क्षमा याचना कर ली। भगवान ने उसे क्षमा कर दिया। भगवान ने सदस्यो को आश्वासन दिया कि उनकी मागों पर सहृदयतापूर्वक विचार किया जायेगा। प्रतिनिधि मंडल के जाने के बाद भगवान ने नारद को बुलाया और कहा, "नारद, मैं तुम्हें पृथ्वी लोक के भारत देश के लिए विशेष दूत नियुक्त करता हू। तुम पृथ्वी लोक के भारत मे जाकर यह पता लगाओ कि क्या वास्तव मे धर्म की हानि हो रही है। क्या लोग गीता का सन्देश भूल गए है ?"

जब नारद जाने लगे तो भगवान ने उन्हें रोककर कहा, "नारद, पृथ्वी पर तुम्हारा यह रूप नही चलेगा। तुम्हें वहां आधुनिक परिधान मे जाना होगा।" भगवान ने उन्हे यह हिदायत दी कि वे अपनी रिपोर्ट एक सप्ताह के अन्दर पेश करें। नारद ने जब यह कहा कि इतने अल्प समय मे इतना बड़ा कार्य सम्भव नही है तो भगवान ने उन्हें सलाह दी कि वे सैंपल सर्वे करें तथा कुछ लोगो से जानकारी साक्षात्कार पद्धति से प्राप्त करें। पर, रिपोर्ट एक सप्ताह के भीतर आ जानी चाहिए। भारत के प्रतिनिधिमंडल को मैं अपने निर्णय से शीघ्र सूचित करने का आश्वासन दे चुका हूं।

आज्ञा पाने की देर थी, बस नारद ने आधुनिक परिधान ग्रहण किये और भारत मे प्रवेश किया। पहले उन्होंने सरसरी नजर से पूरे भारत का दौरा किया। नारद जी को बडी-बड़ी 'टॉवरें' दिखाई दी। ये टॉवरें दूरदर्शन, आकाशवाणी व डाक-तार विभाग की थी। जब नारद जी ने

आकाशवाणी की इमारत को देखा, तो बाहर बोध-वाक्य (बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय) पर उनकी दृष्टि पड़ी। इस बोध-वाक्य से वे प्रभावित हुए, डाक-तार विभाग के बोध-वाक्य (अहर्निश सेवामहे) से भी उन्हें बड़ा आनंद मिला। जीवन बीमा निगम की ऊंची इमारत पर उन्हें 'योगक्षेमं वहाम्यहम्' पढ़ने को मिला। उन्होंने देखा कि पुलिस का बोध-वाक्य 'सद् रक्षणाय खल निग्रहणाय' है। कोर्ट में 'सत्यमेव जयते' का बोर्ड हर जगह लगा है। उन्हें लगा कि भारतवासी अभी भी देवभाषा नहीं भूले हैं और हर विभाग जनता की भलाई में तल्लीन है। आकाश मार्ग से नारद जी ने अवलोकन किया कि लाखों की तादाद में लोग गंगा तथा अन्य पवित्र नदियों में स्नान कर पुण्य लूट रहे हैं। स्थान-स्थान पर भव्य मन्दिरों को देखा, जहां भक्तगण भगवान के दर्शन के लिए लम्बी-लम्बी कतारों में खड़े पसीना पोंछ रहे हैं। तिरुपति के मंदिर में भक्तगण करोड़ों रुपये दान देते हैं, यह जानकर उन्हें बड़ी प्रसन्नता हुई।

नारद जी ने विचार किया कि अब उन्हें कुछ सैंपल इकट्ठे करने चाहिए और कुछ लोगों का साक्षात्कार लेना चाहिए। इस उद्देश्य से वे एक नगर के एक साधारण परिवार में प्रवेश करने लगे। बाहर किसी को न देखते हुए उन्होंने कालबेल बजायी। अन्दर से एक सुन्दर महिला निकल कर आयी। नारद जी ने उसे प्रणाम करते हुए कहा, "देवी, मैं आपसे कुछ पूछना चाहता हू।" गृहिणी बोली, "थोड़ी देर में टी. वी. पर 'महाभारत' सीरियल आने वाला है। अतः मैं अभी आपको समय नहीं दे सकती। अच्छा हो आप कल आ जाएं।" नारद जी थोड़े निराश हुए, बाद में जब गम्भीता से विचार किया तो उन्हें आश्चर्य हुआ कि भारतवासी महाभारत के प्रति कितना सद्भाव रखते हैं कि वे इस दिन किसी से मिलना भी नहीं चाहते। धन्य है भारत भूमि।

दूसरे दिन उन्होंने एक स्कूल में प्रवेश किया। उन्होंने स्कूल के चौकीदार से पूछा, "क्या इस विद्यालय में देवभाषा पढ़ाई जाती है?" चौकीदार बोला, "देवभाषा क्या?" नारद ने खुलासा किया, "संस्कृत"। चौकीदार ने एक कमरे की ओर इशारा करते हुए कहा, "हमारे स्कूल में एक संस्कृत के शास्त्री हैं। आप उनसे मिल लीजिए। वे आपको संस्कृत की सब जान-

बोल उठा, "जी, पंडित जी।" उसी कक्षा में एक नटखट छात्र से न रहा गया और टोक बैठा, "पंडित जी, यह झूठ बोल रहा है। स्कूल की सभी लडकियों को यह छेडता रहता है। सब लडकियां इससे परेशान हैं।" शास्त्री जी को बड़ा बुरा लगा अपने ट्यूशन के लड़के का अपमान होते देख उन्होंने शैतान लड़के को डाटते हुए बैठा दिया। फिर नारद को सम्बोधित कर बोले, "हमारा छात्र इस श्लोक का अक्षरशः पालन करता है। इस श्लोक में कहा गया है कि दूसरे की स्त्री मां के समान है, कुआंरी लडकी किसी की स्त्री नहीं होती, अतः उसको मां मानने का प्रश्न ही नहीं उठता। यदि कुआंरा लड़का किसी कुआरी लड़की से प्रेम सम्बन्ध रखना चाहे तो यह शास्त्रविरुद्ध नहीं है। इस श्लोक के दूसरे भाग में कहा गया है, 'परद्रव्येषु लोष्टवत्' मेरा छात्र इसका भी अक्षरशः पालन करता है। वह दूसरे के धन को ही क्या, अपने पिता के धन को भी मिट्टी के ढेर के समान समझकर बरबाद करता है।"

नारद जी इस व्याख्या से संतुष्ट हो गये और बीच में ही टोक कर बोले, "बस, बस छात्रों के ज्ञान तथा उस पर अमल करने की प्रवृत्ति को देख कर मैं बहुत प्रसन्न हुआ, "इतना कहकर नारद जी ने वहां से प्रस्थान किया।

अगले दिन नारद जी सरकारी कार्यालय में गये। मुख्य द्वार के पास उनका साक्षात्कार एक रिसेप्शनिस्ट से हुआ जो सोलह शृंगार में अप्सरा जैसी लग रही थी। रिसेप्शनिस्ट को देखते ही नारद हक्के बक्के रह गये। सोचने लगे कि यह स्वर्ग की अप्सरा धरती पर कैसे आ गयी। नारद जी की स्तम्भित मुद्रा देख कर रिसेप्शनिस्ट ने मुस्कराते हुए पूछा, "कहिए, आपको किससे मिलना है?" नारद का ध्यान भंग हुआ। वे बोले, "ऐं-ऐं···यहां के सबसे बड़े अफसर से।" रिसेप्शनिस्ट ने अफसर से फोन पर अनुमति ली। फिर नारद जी को एक प्रवेश पत्र दिया, जिसमें कक्ष नम्बर भी लिखा था। नारद जी ने जब अफसर के कक्ष में प्रवेश किया तब वे एक फिल्मी पत्रिका पढ़ रहे थे। नारद जी को कक्ष में देखकर उन्होंने पत्रिका टेबुल के एक कोने पर रख दी और उनको बैठने का संकेत किया। अफसर पहने तो सूट और टाई थे, पर माथे पर तिलक लगाये थे। नारद

ने प्रसन्नता व्यक्त करते हुए इसका कारण पूछा तो अफसर ने बताया, "मैं दक्षिणी भारतीय ब्राह्मण हूं। धार्मिक संस्कारों में मेरा पालन-पोषण हुआ है, अतः यह तिलक लगाता हूं। चूंकि मेरी शिक्षा अंग्रेजी माध्यम स्कूल में हुई है। अतः सूट पहनता हूं।"

नारद जी ने थोड़ी भूमिका के बाद बात को आगे बढाते हुए कहा, "क्या भारत में लोग गीता के सन्देश को भूल गये हैं? गीता का यह श्लोक 'कर्मण्येवाधिकारास्ते मा फलेषु कदाचन' तो सत्य है। क्या लोग इसका पालन करते हैं?"

अफसर ने अपना चश्मा टेबुल के एक कोने पर टिकाया और टाई की नॉट ढीली करते हुए बोले, "मैं और जगह की तो नहीं जानता, पर मेरे कार्यालय में इस श्लोक का पालन होता है। स्वतन्त्रता के बाद भारतीय अपने अधिकारों के प्रति बहुत सचेत हो गये हैं। हमारे कर्मचारी भी काम करने को अपना अधिकार मानते हैं। अधिकसर तो एक ऐसी चीज है जिसका प्रयोग करना या न करना व्यक्ति की इच्छा पर निर्भर है। उस पर कोई बन्दिश नहीं लगा सकता। हमारे कर्मचारी भी जब इच्छा होती है तब थोड़ा बहुत काम कर लेते हैं। फल की चिन्ता तो वे करते ही नहीं क्योंकि वे जानते हैं सरकारी नौकरी में गधे-घोड़े सभी को पदोन्नतियां मिल जाती हैं।" नारद जी इस व्याख्या से बहुत प्रसन्न हुए और वहां से प्रस्थान किया।

नारद जी ने सोचा कि हर युग में थोड़ बहुत अपराध और अत्याचार तो होते ही रहते हैं। देखना यह है कि इसके लिए सरकार क्या कर रही है। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए नारद जी ने समाज कल्याण मंत्री से साक्षात्कार 'डेटा' इकट्ठा करना जरूरी समझा। जब नारद जी समाज कल्याण मन्त्री से मिलने उनके घर पहुंचे तो दरवान ने उन्हें रोक दिया। नारद ने जब मंत्री से मिलने की इच्छा प्रकट की, तो दरवान ने पूछा कि क्या उन्होंने मंत्री से मिलने की पूर्व अनुमति प्राप्त की है। नारद के 'न' कहने पर उसने उन्हें बंगले में प्रवेश करने की अनुमति नहीं दी। जब उन्होंने दरबान से बहुत मिन्नतें की तो उसने मंत्री के पी० ए० को फोन लगा दिया। नारद जी ने पी० ए० को अपने आने का उद्देश्य

बताया। उन्होंने कहा, "धर्मावलंबियों का एक प्रतिनिधि मंडल भगवान से मिला था, जिसने बताया कि भारत में अधर्म बढ़ गया है, अतः भगवान अवतार लें भगवान ने मुझे इसलिए भेजा है कि मैं स्थिति का जायजा लूं और एक वस्तुनिष्ठ रिपोर्ट भगवान के सामने पेश कर दूं। पी० ए० ताड़ गया कि यदि नारद ने एडवर्स रिपोर्ट दे दी तो भगवान अवतार ले लेंगे। पापी होने के कारण मंत्री तो मारे ही जायेंगे, साथ ही मेरा भी बुरा हाल होगा। अतः उसने तुरन्त नारद को मन्त्री से मिलने का समय दे दिया और दरबान को आदेश दिया कि नारद को सम्मान अतिथि कक्ष में ले आये। पी० ए० का आदेश सुनकर दरबान ने नारद को सलाम ठोका और बड़े सम्मान के साथ अतिथि गृह की ओर ले चला।

इतने में पी० ए० ने मंत्री को इस विकट परिस्थिति से निपटने के लिए आगाह कर दिया। पी० ए० ने नारद जी का अतिथि गृह में स्वागत-सत्कार किया और उनसे पूछा कि वे कौन सा पेय ग्रहण करेंगे। नारद जी के प्रिय पेय के साथ काजू किशमिश, अंगूर सेब रखे गये। नारद इतने पकवान देख कर बड़े प्रसन्न हुए। मन में सोचने लगे कि भारत बहुत धनी देश है, जहां एक व्यक्ति के लिए इतना नाश्ता परोसा जाता है।

कुछ ही देर में अतिथि कक्ष में मंत्री जी ने मंत्री-मुस्कराहट मुद्रा में हाथ जोड़े हुए प्रवेश किया। मंत्री जी की विनम्रता देखकर नारद जी ने महसूस किया कि धन्य हैं भारत वासी जहां के शासक इतने विनम्र हैं। औपचारिक वार्तालाप के बाद नारद जी ने अपने आने का उद्देश्य बताया अब नारद जी सामान्य जनता द्वारा की हुई शिकायतें बताते जाते और मंत्री महोदय उनके उत्तर देते जाते। मंत्री जी के उत्तर कुछ इस प्रकार थे।

मारकाट मचा रखी है। पर मेरे अपने विचार से जनसंख्या कम करने का यह एक उपाय है। हमने कई बीमारियों पर काबू पा कर मृत्यु-दर को घटाया है। इससे जनसंख्या अधिक बढी है। यदि आतंकवादियों की मार-काट को इस संदर्भ मे देखें तो अधिक उचित होगा। वैसे भी भारत कल्याण कारी राज्य है। जनता की भलाई के लिए सरकार सब कुछ करने को तैयार रहती है। अब आप ही देखिए कि हमने गाव-गाव मे टी० वी० सेट पहुचाये हैं। द्वापर युग मे जो सुविधा केवल सजय (जिसने महाभारत का युद्ध स्वयं बी० बी० पर देखकर उसका वर्णन धृतराष्ट्र को सुनाया था) को प्राप्त थी, आज हमने जनसामान्य तक पहुंचा दी है।

नारद जी का समय पूरा हो रहा था। जाते-जाते उन्होंने एक विद्वान से साक्षात्कार करना जरूरी समझा। इसी उद्देश्य से वे एक विद्वान के घर गये। विद्वान बड़े घिस्सू थे। उन्होने नारद से उनके बारे में और भारत मे उनके आने के उद्देश्य के बारे मे पूरी जानकारी बातो-बातो मे उगलवा ली, विद्वान ने कुछ क्षण सोचा। उसके बाद उसका माथा ठनका। उसे लगा कि वह वास्तव में अपना कर्तव्य पूरा नही कर रहा है। यदि भगवान ने अवतार ले लिया तो दुष्ट होने के कारण वह भगवान के हाथों मारा जायेगा। अतः उसने ऐसी रिपोर्ट देना उचित समझी कि अभी पाप बढ़े नहीं हैं और भगवान को अवतार लेने की अभी आवश्यकता नहीं है। विद्वान वाक्पटु तो थे ही। विद्वान ने नारद को ऐसा आभास कराया कि वे धार्मिक हैं और भगवान के भक्त भी। उन्होने नारद जी की बहुत प्रशंसा की और उनको बहुत बढ़िया भोजन कराया। बातों-बातों में विद्वान ने नारद जी को इस प्रकार प्रभावित कर लिया कि वे स्वय सोचने लगे कि इतने अधर्म होने पर भगवान का अवतार लेना न्यायोचित नही ठहराया जा सकेगा।

नारद जी का एक सप्ताह पूरा होने को ही था। अत. वे अपना सर्वे तथा साक्षात्कार के कुछ नमूने ले कर भगवान के पास पहुंचे। भगवान ने नारद जी की रिपोर्ट को चित्रगुप्त के पास भेजा, जिससे वे रिपोर्ट का

अध्ययन कर अपनी टिप्पणी के साथ भगवान के समक्ष अगले दिन प्रस्तुत करें।

चित्रगुप्त ने भगवान को इस प्रकार नोट शीट पर लिख कर दिया—
1. आपने गीता में कहा है :

> यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
> अभ्युत्थानमधर्मस्य तदाऽऽत्मानं सृजाम्यहम्॥

नारद की रिपोर्ट से यह सिद्ध होता है कि भारत में अभी धर्म की इतनी हानि नहीं है। अत. इस समय आपके अवतार लेने की आवश्यकता नहीं है।

2. आपने गीता मे कहा है :

> परित्राणाय साधूनाम विनाशाय च दुष्कृताम्।
> धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे॥

नारद के सर्वेक्षण से पता चलता है कि प्रथम कार्य पुलिस (जिसका बोध वाक्य 'सद् रक्षणाय खल 'निग्रहणाय' है) बखूबी निभा रही है। संप्रति देश में कई धार्मिक संस्थाओं ने जन्म ले लिया है। वे अपने-अपने धर्म के हितों की रक्षा मे सक्षम जान पड़ते हैं। अतः इस समय आपका अवतार लेना अनावश्यक है।

3. भारत धर्म निरपेक्ष राज्य है। अतः आपका किसी एक धर्म मे जन्म लेना उचित नही होगा।

4. त्रेता युग मे आपने जिस स्थान पर जन्म लिया था वह जन्मभूमि का मामला न्यायालय मे पडा हुआ है। इससे साम्प्रदायिक तनाव काफी बढ़ गया है। ऐसी परिस्थिति मे आपके पुनः अवतार लेने से साम्प्रदायिक तनाव अधिक बढ़ने की सम्भावना है।

5. नारद ने भारत का दौरा कर जो तथ्य एकत्रित किये हैं, उनसे ऐसा कोई आभास नहीं होता कि आपके अवतार लेने की तत्काल कोई आवश्यकता है।

भगवान ने बड़े ध्यान से चित्रगुप्त की नोट-शीट पढ़ी- [illegible]

वासियों को एक पत्र द्वारा सूचित कराने का आदेश दिया कि आपके देश मे अधर्म अभी सीमा को लांघ नही पाया है। हम भी नियमों से बद्ध है। जब धर्म की बहुत अधिक हानि होती है, तभी भगवान का अवतार लेना संभव है। अतः भगवान के जन्म लेने का कार्य अभी स्थगित किया जाता है। भारतवासियो को निर्देश दिया जाता है कि वे अधर्म और अधिक बढ़ने पर पुनः सूचित करें। उस समय उनकी प्रार्थना पर पुनर्विचार किया जायेगा।

# भारत : व्यंजनाओं का देश

मेरे एक मित्र जब विदेश से लौटकर आए तो वे कहा करते थे, "भाई, हम तो विदेशों में खाने को तरस गए। खाने की वैराइटी तो केवल अपने देश में मिलती है। वाह! क्या कहने हैं, अपने देश को तो व्यजनों का देश कहा जाए, तो अतिशयोक्ति न होगी।" एक दिन मैंने उनसे कहा, "हुजूर, यह तो आप अपने देश को अपने दृष्टिकोण से देख रहे हैं। कभी आपने अपने देश को विदेशी नजरिए से भी जानने का प्रयत्न किया है?" उनका उत्तर था, "यह काम आप कीजिए।" उसी दिन से मैंने इस विषय पर डेटा इकट्ठा करना आरम्भ कर दिया और परिणाम है यह निबंध।

निबन्ध का साराश यह है कि विदेशियों की दृष्टि में भारत व्यंजनाओं का देश है। भारतवासी व्यंजनों के प्रेमी तो हैं ही, पर उससे अधिक वे व्यंजना के प्रेमी है।

भारतीय व्याकरणों में तीन शक्तियों का उल्लेख किया जाता है। अभिधा, लक्षण और व्यंजना। इनमे व्यंजना का एक अपना अलग ही महत्त्व है। हमारे आचार्यों ने व्यंजना-शक्ति या व्यग्यार्थ को हमारे साहित्य में इतना अधिक महत्वपूर्ण माना कि इसकी प्रतिष्ठा करने के लिए आचार्य आनन्दवर्धन ने ध्वनि सिद्धात ही बना डाला। ध्वनिवादी केवल व्यजना को ही वास्तविक काव्य का मूलाधार मानते हैं। उनके अनुसार व्यंजना ही काव्य में निहित अकथित अर्थ को स्पष्ट करने में समर्थ होती है, अभिधा और लक्षण नहीं। अलकारवादी भामह ने वक्रोक्ति को सपूर्ण अलंकारों की जननी घोषित किया। किसी बात को सीधे कहने से सरसता नहीं आती। अतः उसे चमत्कारिक ढंग से कहना ही वक्रोक्ति है।

भारतीय साहित्य में तो व्यंजना सम्मानित है ही, सम्पूर्ण भारतीय लोकजीवन में भी व्यंजना के दर्शन होते हैं। शब्द का अर्थ कुछ और, और शब्द के अर्थ का अर्थ कुछ और। यदि आपने यह समझ लिया, तो समझिए कि आपने भारतीय लोकमानस तथा संस्कृति को जान लिया।

आरम्भ हम भारतीय भाषाओं की जननी संस्कृत से करते हैं। संस्कृत मे 'देवानाम् प्रियः' का अर्थ होता है—"जो देवताओं को प्रिय हो पर हमारे देशवासियो को यह अभिप्रायं पसन्द नही आया। अत. उन्होंने इसका अर्थ 'मूर्ख' कर दिया। अब आप ही सोचिए कि क्या आप अपने को देवताओं का प्यारा कहलाना पसन्द करेंगे ?'

अब आइए आधुनिक काल में। 'आंख' के अन्धे नाम नैनसुख' आपको हमारे यहां शत-प्रतिशत चरितार्थ होता दीखता है। अपने देश के मां-बाप अपने बच्चो का नाम व्यंजना मे ही रखते हैं। इसीलिए आपको छदम्मी-लाल और कौडीमल चार-चार मिलों के मालिक मिलेंगे। भिखारी दास को प्रतिमाह बैंक से ब्याज के रूप मे पाच हजार रुपए भीख मिलती है। उधर अमीरचन्द के घर में खाने के लाले पड़े हैं। कुल-दीपक डकैती में पकड़े गए और अपने कुल का नाम डुबा रहे हैं। शान्ति जी सुबह-सुबह उठकर अपने पड़ोसियो की शान्ति भंग करती हैं और तृप्ति जी अपने पति से नित नई फरमाइशे करती नही अघाती। सावित्री जी का दो-दो जगह रोमांस चल रहा है, तो चालीस वर्षीया द्रोपदी को पाच की बात तो छोड़िए, एक पति भी नसीब न हो सका।

भारतीय धर्मभीरु कहलाए जाते हैं। इसका अर्थ यह है कि अपने देश मे धर्म के नाम पर छुरेबाजी और बलात्कार किए जा सकते हैं। 1947 की घटनाएं अभी आप भी नही भूले होगे। राम जन्म-भूमि विवाद पर हुए दंगे तो अभी ताजा हैं। जब हमारे घर मे नई बहू आती है तो लक्ष्मी कहकर उसका स्वागत किया जाता है। थोड़े दिनों बाद हम भौतिकवादी दृष्टिकोण छोड अध्यात्मवादी बन वैराग्य धारण कर लेते हैं। और अपनी बहू को जलती देखते रहते हैं। हमारे देश मे स्त्री को शक्ति का अवतार माना जाता है, इसीलिए उसे अबला कहते हैं।

भारत एक राष्ट्र है और इस राष्ट्र मे एक महाराष्ट्र है और दूसरा

सौराष्ट्र । हुई न यह व्यंजना । हर राष्ट्र की राजभाषा देशी होती है । पर हमारे देश मे राजभाषा एक विदेशी भाषा है। राज हमारा, राजभाषा विदेशी की । हमारी मातृभूमि मे देशी समस्याएं हल करने के लिए विदेशी विशेपज्ञो से सलाह ली जाती है या हमारे नेता देशी समस्याएं सुलझाने विदेश जाते हैं । प्रत्येक वर्ष सरकारी घोषणा होती है कि देश तरक्की कर रहा है, क्योंकि विशेषज्ञो के आकडे ऐसा बताते हैं। पर इसका अर्थ यह है कि गरीबी बढ़ रही है और गरीबों की संख्या बढ रही है ।

हमारे देश मे 'पब्लिक प्रापर्टी' का अर्थ होता है, वह संपत्ति जिसका उपयोग प्राइवेट काम के लिए किया जा सके । ऑफिस की गाड़ी अफसर के बीवी-बच्चो को सिनेमा दिखाने ले जाती है। ऑफिस के टेलीफोन से आप सैकड़ो प्राइवेट फोन कर सकते हैं । छात्रो के लिए पब्लिक प्रापर्टी का दूसरा अर्थ है। वे पब्लिक प्रापर्टी का उपयोग ईंधन की भांति करते है और हड़ताल करते समय उसे जलाकर यज्ञ का यश प्राप्त करते हैं ।

हमारे देश में स्कूलों को शिक्षा का मन्दिर भी कहा जाता है । कहा जाता है कि शिक्षा चरित्र का निर्माण करती है। इसीलिए आपको स्कूलों में लड़कियो से छेड़खानी, गुंडागर्दी व छुरेबाजी के दर्शन होगे ।

देखिए, हम पड़ोसी से प्रेम करो (लव दाई नेबर) को किस प्रकार चरितार्थ करते हैं। हम पड़ोसी से तो चाहे झगड़ा करें पर पड़ोसिन से अवश्य प्रेम करते हैं। हमारे देशवासियो को मां-बहनो से इतना प्यार है कि गाली देते समय भी वे उनको याद करना नही भूलते ।

हिन्दी मे आफिस को कार्यालय कहते हैं, अर्थात काम करने का स्थान, पर हम भारतीय कार्यालय को काम करने का स्थान नही वरन आराम करने या सोने का स्थान समझते है । हमारे देश मे जिनके पास कार है, उनके बच्चे बेकारी भत्ता ले रहे है । कुछ तो कार वाले ऐसे हैं जो बेकार का भत्ता ले रहे हैं ।

'शोध' का अर्थ होता है कि आप कुछ मौलिक लिखें, पर भारत में शोध का मतलब होता है कि आप कुछ विद्वानों के विचारों की नकल कर दें और गुरु सेवा तथा इधर-उधर की तिकड़म से पी-एच० डी० की डिग्री प्राप्त कर लें ।

विदेशी ट्रेन या बस का समय जानने के लिए समय-सारणी खरीदता है। पर भारतीय यह जानता है कि हमारे यहा समय-सारणी ट्रेन या बस का समय बताने के लिए नही होती, वरन यह पता लगाने के लिए होती है कि ट्रेन या बस कितने घंटे लेट चल रही है।

पुलिस को हमारे यहा लोक-रक्षक कहा जाता है। यदि आप भारत में रहते हैं तो आप जानते होगे कि भक्षक का कार्य भी हमारी पुलिस ही करती है। पुलिस थानों मे बलात्कार के समाचार आपने पढ़े ही होंगे। यदि कोई विदेशी पूछे कि आपकी पुलिस रक्षा किसकी करती है, तो आप को यही उत्तर देना होगा कि मन्त्रियों की और असामाजिक तत्वो की। इससे भी मजे की बात यह है कि पुलिस का बोध वाक्य है—सद रक्षणाय खल निग्रहणाय। हर भारतीय जानता है कि सद थाने के पास से गुजरते घबडाता है और खल पुलिस से दोस्ती रखता है और संरक्षण प्राप्त करता है।

हमारे देश में सूचनाए भी व्यंजना मे लिखी जाती है। विदेशियो को इन्हे समझने मे परेशानी होती है। अपने देशवासी इन सूचनाओ के व्यंग्यार्थ को समझते हैं, अतः उन्हें कोई परेशानी नही होती। कचहरी को हिंदी में न्यायालय या न्याय मन्दिर कहा जाता है। आप जानते हैं कि वहा न्याय छोड़ कर सब कुछ मिलता है। न्यायालय में आपको 'सत्यमेव जयते' लिखा मिलेगा। हम सब जानते हैं कि न्यायालय मे सत्य की नही पैसे की विजय होती है। जिसके पास जितना अधिक पैसा है, वह उतना बड़ा वकील रख सकता है और इस प्रकार न्याय को खरीद सकता है। गरीब आदमी को तो बिना पैसे जमानत भी नही होती। न्यायालय में सब को यह शपथ दिलाई जाती है कि मैं सत्य बोलूंगा। और सत्य के अतिरिक्त कुछ नहीं बोलूगा। खरीदा हुआ गवाह यह शपथ के बाद सत्य को छोड़कर सब कुछ बोलता है। यदि आप न्यायालय मे सत्य बोलने लग जाएं तो आपके मुकदमा हारने के शत-प्रतिशत चांसेज हैं।

हमारे देश के कुछ स्थानों पर लिखा रहता है कि 'यहा पेशाब करना मना है।' यह वाक्य विदेशियों को गुमराह करता है। भारतीय जानते हैं कि इसका अर्थ है कि पेशाब यहीं करना है। हमारे देश मे जहा लिखा हो

'मूत्रालय' इसका अर्थ यह है कि आप वहां शौच कर सकते हैं और जहां लिखा हो 'शौचालय', वहा या तो ताला लगा होगा या इतनी गंदगी होगी कि आप वहा घुस नहीं सकते। सार्वजनिक शौचालयो के बाहर लिखा रहता है—फ्री सर्विस या बिना मूल्य सेवा। इसका अर्थ यह है कि यदि आपको उस सार्वजनिक स्थान का उपयोग करना है तो वहा बैठे मेहतर को कम-से-कम पच्चीस पैसे अवश्य देने हैं।

भारतीय जगलों मे स्थान-स्थान पर सूचनाए लिखी होती है—यहां शिकार खेलना मना है। जहां यह सूचना लिखी है उसी के आसपास आपको कुछ बदूकधारी शिकार खेलते मिल जाएगे। हमारे देश मे जहा लिखा हो, 'यहा लिफाफे मिलते हैं', 'यहां मिट्टी का तेल मिलता है,' आदि आदि, इसका मतलब यह है कि ये चीजें आपको वहा नही मिलेंगी। 'आउट ऑफ स्टॉक' कहकर आपका स्वागत किया जाएगा। कई सार्वजनिक स्थानो तथा बसो मे लिखा रहता है 'यहा धूम्रपान करना मना है।' इस वाक्य के नीचे बैठा ड्राइवर या कडक्टर आपको सिगरेट या बीड़ी पीता मिल जाएगा। आर० टी० ओ० ऑफिस मे लिखा रहता है 'आप अपना काम एजेंटो के माध्यम से मत कराइए।' पर वहा जाने वाला व्यक्ति जानता है कि इसका मतलब यह है कि यदि आपको काम कराना है तो एजेंटो के माध्यम से ही हो सकता है। जहा यह वाक्य लिखा रहता है, उसके पास एजेंट बैठा भी रहता है, जिससे आपको कोई असुविधा न हो। हमारे देश मे अस्पतालो को 'स्वास्थ्य-केंद्र' भी कहा जाता है, पर आपको सबसे अधिक अस्वास्थ्य-प्रद वातावरण यही मिलेगा। जहा लिखा हो 'यहा दवा मुफ्त मिलती है', इसका अर्थ यह है कि वहां दवा मिलती ही नहीं, हमेशा 'आउट ऑफ स्टॉक' रहती है।

हमारे देश मे ट्रक पर लिखा रहता है लोक वाहक। पर हम सब जानते हैं कि हमारे यहा के ट्रक परलोक वाहक होते हैं। ट्रक लोगों को परलोक पहुंचाने का काम बखूबी करते हैं। हमारे यहां शराब पीकर ड्राइव करना मना है, पर हमारे यहा ड्राइवर शराब पीकर ही ड्राइव करता है।

बड़ी-बड़ी सभाओ मे सबसे आगे वाली कुर्सियो पर लक्ष्मीपति व्यापारी अर्धशक्ति राजनीतिज्ञ बैठते हैं। अन्य खाली कुर्सियों को किराए के श्रोता

सुशोभित करते हैं। वक्ता सभा को सम्बोधित कर कहता है—प्रबुद्ध श्रोतागण! बताइए इससे अच्छा व्यंग्य क्या हो सकता है। सम्बोधन के मामले में भारतीय वैसे भी अपनी उदारता के कारण व्यंजना का ही प्रयोग करते हैं। वे झाड़ू लगाने वाले को 'जमादार', दर्जी को 'मास्टर' आदि से सम्बोधन कर मजा लेते हैं।

भारत की अन्य भाषाओं में भी आपको व्यंजना के उदाहरण मिलेंगे। बंगला और मराठी में यदि आपको यह कहना है कि 'मैं जाता हूं', तो आप को कहना होगा 'मैं आता हूं।' उर्दू वाले तो व्यंजना मे ही बात करते हैं। उर्दू कवि अपनी प्रेमिका को पुल्लिंग में सम्बोधित करते हैं। आपने अपना मकान लाखों रुपये खर्च करके बनवाया होगा, पर आप उसे 'गरीबखाना' कहेंगे। पुत्र शत-प्रतिशत आपका हो, पर परिचय कराते समय आपको यही कहना पड़ेगा 'यह आपका ही साहबजादा है।' तबियत आपकी खराब हो पूछने वाला पूछेगा, 'सुना है कि हुजूर के दुश्मनों की तबियत नासाज है।' अब आप ही बताइए इससे बड़ी व्यंजना और क्या हो सकती है।

व्यंजना के कारण हमारे देश मे कुछ श्लोको की पुनर्व्याख्या होने लगी। एक विदेशी का अनुभव सुनिए। उसने सुन रखा था कि भारत धर्मप्रधान देश है, अतः वह धर्म की दीक्षा लेने चला आया। भारत मे उसने ऋषिकेश को अपना स्थान चुना और वहां के एक आश्रम मे रहने लगा। ऋषिकेश मे एक कहावत है—'ब्रह्मचारी का पुत्र ब्रह्मचारी होता है।' विदेशी महोदय इस कहावत को सुनकर बहुत चकराये। थोड़े दिनो बाद उन्होंने अपने आश्रम में भी व्यभिचार के कुछ लक्षण देखे। उनसे नही रहा गया तो एक दिन उन्होंने आश्रम के स्वामीजी से प्रश्न किया, "आश्रम मे यह व्यभिचार क्यों ?" स्वामीजी ने विदेशी को समझाया, "वत्स, यह तो तेरी दृष्टि का दोष है। भारतवासी और विशेषतया इस आश्रम के वासी 'मातृवत् परदारेषु परद्रव्ये लोष्टवत् आत्मवत् सर्वभूतेषु यः पश्यति सः पण्डित.' का ही पालन करते हैं।" विदेशी महोदय ने फिर वे ही रंग-ढंग देखे तो उन्होंने स्वामीजी के समक्ष फिर जिज्ञासा रखी। स्वामीजी का उत्तर था, "तुम विदेशी लोग ऊपरी अर्थ से ही संतुष्ट हो जाते हो, गहराई तक नही जाते। हमारे ऋषि-मुनियों ने जो श्लोक बनाये हैं, उनका अर्थ केवल हम

लोग ही समझ सकते हैं।" विदेशी ने पूछा, "अब तो मैं आपका शिष्य हूं, कुछ प्रकाश की किरणें इधर भी फेंकिए और इस श्लोक का गूढ अर्थ बता कर इस दास को कृतार्थ कीजिए।" स्वामीजी की व्याख्या इस प्रकार थी, 'मातृवत् परदारेषु' का अर्थ है—'दूसरे की स्त्री को अपनी मां के समान मानो।' अविवाहित स्त्री किसी की स्त्री नही है, अत. उसको मां मानने का कोई औचित्य नहीं है। 'परद्रव्ये लोष्टवत' का अर्थ है—'दूसरे के धन को मिट्टी के ढेर समान समझो'। जिस प्रकार आप मिट्टी का कोई मूल्य नहीं समझते, उसी प्रकार आप दूसरे के धन (सरकारी धन भी इसी में आता है) को खूब बरबाद कर सकते हैं। 'आत्मवत् सर्वभूतेषु' का अर्थ है—'आप अपने समान दूसरो को समझिए।' इस श्लोक मे यह नही दिया है कि आप अपने को कैसा समझिए। इसकी व्याख्या आपको अन्यत्र मिलेगी। हमारे यहा अपने को छोटा और हीन समझने की परम्परा है। इसीलिए अपने को 'नाचीज' भी कहा जाता है। जिस प्रकार आप अपने को तुच्छ व हीन समझते हैं, उसी प्रकार दूसरे को भी समझिए। ऐसे ही व्यक्ति को अपने देश मे पण्डित कहा जाता है। श्लोको के गूढ अर्थों को समझ कर विदेशी को ज्ञान प्राप्त हो गया। आधुनिक स्वामीजी का आधुनिक शिष्य विदेश में भारतीय धर्म की पुनर्व्याख्या करने चला गया।

इतना सब कुछ सुनने-समझने के बाद अब आपके पास दो विकल्प हैं। प्रथम या तो आप व्यंग्यकार की तरह हंसिए। द्वितीय विकल्प यह है कि आप कबीर की तरह रोइए।

# साहित्य भंडार

जायसवाल साहब इस नगर के जाने-माने सेठ हैं। वे नगर के सम्मानीय व्यक्ति माने जाते हैं। उनका जन्म और लालन-पालन तो गरीबी में हुआ। पर बारह सालों के बाद जैसे घूरे के दिन फिरे। जायसवाल साहब के एक बाल-सखा मंत्री बन गए। फिर क्या था? बिल्ली के भाग्य से छीका टूट गया। जायसवाल साहब को बिना रिश्वत दिए और बिना किसी परेशानी के विदेशी दारू की दुकान का लायसेंस मिल गया। थोड़े ही समय में जायसवाल साहब नव-धनाढ्य बन गए। उनको अब अपना जीवन भी उसी के अनुरूप नव-धनाढ्य संस्कृति के ढांचे में ढालना पड़ा। उनके पास विभिन्न प्रकार व हर तबके के लोग आते-जाते। उनमें साहित्यकार और कलाकार भी होते। उनके मंत्री-मित्र, जो उनके सलाहकार भी थे, ने समझाया, "तुम्हारा नाम राजनीति में तो बहुप्रचलित हो चला है, क्योंकि तुम हर पार्टी के लोगों को चंदा देते हो। अब तुमको साहित्यिक क्षेत्र में भी घुसपैठ करनी चाहिए। माना तुम खुद साहित्यकार और कलाकार नहीं हो और न ही हो सकते हो, लेकिन तुम ऐसा पोज तो कर ही सकते हो कि तुम साहित्य और कला-प्रेमी हो।" जायसवाल साहब ने उनसे कहा कि वे अपना विचार जरा विस्तारपूर्वक समझाएं। मंत्री-मित्र ने बताया, "तुम अपने घर को आधुनिक ढंग से सजाओ। इसके लिए जरूरी है कि तुम प्राचीन वस्तुओं (एन्टीक) का संग्रह करो। दीवारों को आधुनिक कलाकृतियों से सजाओ। महीने-दो महीने में अपने घर में साहित्यिक गोष्ठी तथा शास्त्रीय संगीत के प्रोग्राम कराओ। सबसे बड़ी बात यह है कि किसी साहित्यिक रुचि वाली स्त्री से विवाह कर लो।

जायसवाल साहब ने मित्र की सलाह मान ली। उनकी जाति मे उनको साहित्य-प्रेमी कन्या न मिल पाई तो उन्होने एक स्थानीय कवयित्री, जो उसकी गोष्ठियो मे अक्सर आया-जाया करती थी, से विवाह कर लिया। पत्नी गरीब घर की थी। उसे मालूम था कि जायसवाल साहब की साहित्य तथा कला मे कोई रुचि नही है। लेकिन उसने सोचा कि वे एक-दूसरे के पूरक तो हो ही सकते हैं। पत्नी के पास साहित्य था और पैसा नही, जायसवाल साहब से सरस्वती ने भले ही बेरुखी बरती हो, पर उन पर लक्ष्मी की कृपा तो थी ही।

जायसवाल साहब की पत्नी का नाम सुलभा था। वे 'सुमन' के उपनाम से कविता करती थी। थोड़े दिनों तक गृहस्थी की गाड़ी ठीक-ठाक चलती रही। थोड़े दिनों बाद, साहित्य की नासमझी के कारण वे अपने पति को उलाहना देने लगी। जायसवाल साहब उन्हें समझाते कि इस संसार मे लक्ष्मी जी का ही साम्राज्य है। लक्ष्मी से सरस्वती तो कभी भी खरीदी जा सकती है।

कुछ वर्षो बाद उनके घर एक पुत्र-रत्न ने जन्म लिया। शक्ल-सूरत मे वह अपने पिता जैसा ही था। जब नामकरण की बारी आई, तो सेठजी ने अपनी पत्नी से कहा कि मेरे मां-बाप ने तो मेरा नाम छदम्मीलाल रखा था। भला हो उस अंग्रेजी का जिसने इस घटिया नाम की विद्रूपता को सी० एल० के आवरण से ढक दिया। पर अब बेटे का नाम तो अच्छा ही रखेंगे। पत्नी ने दर्जनों शब्दकोश छान डाले और अन्त मे नाम रखा—कुशाग्र।

दर्जनो साहित्यकारों के वर्षों तक लगातार सम्पर्क के कारण जायसवाल साहब को लगने लगा था कि काश वे भी साहित्यकार होते। वे साहित्यकार नही हैं, इसकी उन्हे ग्लानि होने लगी थी। पत्नी। पत्नी ने उलाहना दे-देकर इस ग्लानि को द्विगुणित कर दिया था। यद्यपि वे अपनी पत्नी के सामने इस बात को स्वीकारते नही थे, पर साहित्यकार बनने की छटपटाहट उनके अचेतन मन मे घर कर गई थी। यह मानवीय स्वभाव है कि व्यक्ति अपने जीवन की अपूर्ण अभिलाषाओं को अपनी संतान के भविष्य में साकार होता देखना चाहता है? सेठ जी भी इससे अछूते न थे। वर्षों से

उनके मन मे यह विचार था कि वे अपने पुत्र को साहित्यकार बनाकर अपने अरमान पूरे करेंगे। आरम्भ से ही उन्होंने इस बात का प्रयत्न किया कि भविष्य मे कुशाग्र एक साहित्यकार के रूप में प्रसिद्धि पाए। सुलभा जी भी कोई अच्छी साहित्यकार न थी, यह बात वे महसूस करती थी। कुशाग्र को एक सफल साहित्यकार के रूप में देखकर वे अपने मन के अतृप्त साहित्यकार के अपूर्णत्व को पूर्णत्व मे परिणित कर देना चाहती थी। किन्तु दुर्भाग्य यह कि कुशाग्र को साहित्य मे ही क्या, किसी भी विषय मे रुचि नही थी। वह पढ़ने-लिखने मे साधारण था। जैसे-तैसे तृतीय श्रेणी मे बी० ए० पास कर लिया। ऐसा व्यक्ति साहित्यकार बने कैसे, यह मां-बाप दोनो के सामने एक विकट समस्या थी। ऐसे अनिर्णय के समय उनके मन्त्री-मित्र कृष्ण की भांति प्रकट हुए अपना संदेश लेकर। उनके मंत्री-मित्र ने उन्हें सलाह दी कि आजकल पैसे के जोर से क्या नही हो सकता। कनाडा और अमेरिका में कहानी लेखन व कविता लेखन आदि के कई कोर्सेज होते हैं। जायसवाल साहब को उनकी सलाह रास आई और दूसरे महीने ही बेटे को कनाडा भेज दिया। कुशाग्र तीन वर्षों तक कनाडा और सयुक्त राज्य अमेरिका के विभिन्न विश्वविद्यालयों से कविता व कहानी लेखन के कई डिप्लोमा बटोरता रहा।

आज पूरे सवा तीन वर्षो बाद कुशाग्र भारत लौट रहा है। माता-पिता फूले न समा रहे है। हवाई अड्डे पर मित्रो और सम्बन्धियों ने कुशाग्र का भव्य स्वागत किया। हवाई अड्डे पर ही मन्त्री-मित्र ने उन्हें सलाह दी कि नव-धनाढ्यों को कोई ऐसा अवसर नही छोड़ना चाहिए जिसके बहाने वे भव्य पार्टी दे सकें। पार्टियों मे विभिन्न तबके के लोगों से मुलाकात हो जाती है तथा बहुत से अनिर्णित मामले जो वर्षों से उलझे पड़े रहते हैं, सुलझ जाते हैं। जायसवाल साहब को मंत्री की सलाह जमी। उन्होंने अपने लड़के के विदेश से लौटने की खुशी मे नगर के सबसे अच्छे होटल मे भव्य स्वागत-समारोह का आयोजन किया। पार्टी मे कई मन्त्री तथा कई पुरस्कृत कलाकार व साहित्यकार पधारे थे। पार्टी में तरह-तरह की विदेशी शराबों का तथा छप्पन भोगो का प्रबन्ध था। जैसे-जैसे विदेशी शराब साहित्यकारों और कलाकारो के गले उतरती जाती, वैसे-वैसे जायसवाल साहब के

गुणगान उनके कण्ठों से विभिन्न शैलियो मे फूटने लगते। पार्टी रात को दो बजे तक चलती रही। साथ में गायन-वादन तथा काव्य-पाठ होते रहे।

दूसरे दिन जायसवाल साहब ने मंत्री महोदय से पूछा कि अब कुशाग्र को क्या करवाया जाए। मन्त्री महोदय ने गम्भीर मुद्रा मे उत्तर दिया—"तुम एक अच्छे व्यापारी हो और भाभी जी एक अच्छी साहित्यकार। तुम यदि कुशाग्र से साहित्य का व्यापार कराओ, तो उसे अपने माता-पिता दोनो के अनुभव का लाभ प्राप्त हो सकेगा।

काफी सोच-विचार के बाद तय किया गया कि अगले महीने इस नगर मे साहित्य भडार खोला जाएगा जिसका उद्घाटन मुख्यमंत्री द्वारा कराया जाएगा। मन्त्रीजी ने आश्वासन दिया कि साहित्य भडार की विस्तृत रूप-रेखा वे भाभी जी से 'डिस्कस' करने के बाद तय करेंगे।

मत्री महोदय की कृपा से नगर के एक प्रसिद्ध कॉमर्शियल कॉम्प्लेक्स मे एक दुकान मिल गई। यह भी तय हो गया कि अगले महीने की एक तारीख को मुख्यमंत्री द्वारा साहित्य भंडार का उद्घाटन किया जाएगा। जायसवाल साहब ने अपने सभी नए-पुराने साहित्यकारों तथा कलाकारो से सहयोग मागा। साहित्यकारों और कलाकारो ने भी अनुभव किया कि जायसवाल साहब उन्हें वर्षों से मुफ्त मे विदेशी दारू पिलाते रहे हैं, अब उनका भी यह कर्तव्य बन जाता है कि वे साहित्य भडार की योजना को सफल बनाने मे कुशाग्र की भरसक सहायता करें।

मित्रो की सलाह पर उस दुकान का नाम 'निराला साहित्य भंडार' रखा गया। बोर्ड पर यह नाम बोल्ड अक्षरों मे लिखा गया। उसके नीचे यह सब-टाइटिल लिखा गया 'यहां समयानुकूल हर प्रकार का साहित्य उचित मूल्य पर उपलब्ध है।'

उनके एक पत्रकार मित्र ने एक पैम्फ्लेट छपवाने मे उनकी मदद की। पैम्फ्लेट इस प्रकार था—

भाइयो और बहनो,

अपने नगरवासियों के लिए एक स्वर्णिम अवसर। अपने नगर के सेठ श्री सी० एल० जायसवाल की समाज सेवा से तो सभी परिचित हैं ही अब उनके सुपुत्र ने नगरवासियों के हितार्थ एक साहित्य भंडार खोला है, जिसका उद्‌घाटन अगले माह की पहली तारीख को मुख्य मंत्री द्वारा होगा। सभी साहित्य-प्रेमियों और सामान्य नागरिकों से निवेदन है कि वे इस अवसर पर पधार कर समारोह की शोभा बढ़ाएं। इस अवसर पर सभी के लिए 'स्वल्पाहार' की व्यवस्था की गई है।

स्वतन्त्रता के बाद जैसे-जैसे शिक्षा बढ़ी है लोगों की साहित्य के प्रति रुचि का भी विस्तार हुआ है। आज सुसंस्कृत कहलाने के लिए हर व्यक्ति चाहता है कि साहित्य में भी घुसपैठ हो। संप्रति लोगों की यह इच्छा है कि उनके जन्मदिन पर काव्यपाठ हो। नवधनाढ्य चाहते हैं कि उनके पिता-श्री की मृत्यु पर शोक-गीत गाए जाए। रईस चाहते हैं कि उनके पुत्र और पुत्रियों के विवाह पर सेहरे गाए जाएं। जब कोई सेठ किसी बड़े ठेके या लाइसेंस के लिए प्रयत्न करता है, तो वह चाहता है कि मंत्री के स्वागतार्थ आयोजित सभा में स्वागत-गीत गाए जाएं।

ये सब आपको कहां मिलेगा? निराला साहित्य भण्डार आपकी इन सब आवश्यकताओं की पूर्ति करेगा। भारत में पहली बार इस प्रकार का प्रयोग किया जा रहा है। आशा है आप सहयोग देकर कृतार्थ करेंगे।

भवदीय
एक शुभचिंतक

उद्‌घाटन समारोह बड़ी धूमधाम से सम्पन्न हुआ। दुकान की ताम-झाम देखकर ग्राहक भी आने लगे। लेकिन समस्या एक थी, जिसका अंदाजा जायसवाल साहब न लगा पाए थे। कुशाग्र रचनात्मक साहित्य के कई डिप्लोमा तो ले आया था, परन्तु सिवाय तुकबन्दी के उसे कुछ न आ सका। अगर वह कोई अपनी कविता पढ़ता तो लगता कि कोई अंग्रेजी टोन में हिन्दी पढ़ रहा हो। नतीजन दुकान घाटे में चलने लगी। कुशाग्र ने भी इस समस्या को माता-पिता के सामने रखा। सुलभा ने अपने पति को

उलाहना देते हुए कहा, "कही साहित्यकार डिप्लोमा प्राप्त करने से ही बन जाते हैं ? मैंने यह बात तुम्हें पहले ही समझाई थी । साहित्यकार आंतरिक प्रेरणा से बनते हैं । लेकिन आप तो लक्ष्मी के बल पर सरस्वती को वश में करने की बात सोचने लगे और साहित्य को भी व्यापार बना लिया ।" जायसवाल जी ने खीझते हुए कहा, "तुम माँ-बेटे दोनों मूर्ख हो । माना कुशाग्र को स्वयं कविता करना नही आती । पर वह अपने भंडार के माध्यम से साहित्य की एजेन्सी तो ले सकता है । व्यापार में एजेण्ट का विशेष महत्व है । यह काम कुशाग्र भी कर सकता है । अपने भडार के माध्यम से वह ग्राहकों और साहित्यकारों को मिला सकता है । सम्प्रति साहित्यकार समाज मे तभी जमता है, जब उसे एजेण्ट मिलता है । योग्य एजेण्ट न मिल पाने के कारण साहित्यकारों का वही हाल होता है, जो महाकवि गालिब का हुआ था । इतना बड़ा कवि होते हुए भी उसे फाके करने पड़े ।

दूसरे ही दिन जायसवाल जी ने निम्नांकित पत्र छपवाया और अपने परिचित और अपरिचित कवियों को भेज दिया—

बन्धुवर,

हमारा साहित्य भंडार काफी समय से जनता की सेवा कर रहा है । अब हमारा कारोबार बहुत बढ़ गया है । हम अपने भंडार के माध्यम से कवियों की सहायता करना चाहते हैं । आप लोगो की कुछ अच्छी रचनाएं साहित्य मे व्याप्त राजनीति के कारण प्रकाशित नही हो पाती । हम ऐसी रचनाओं को अपने साहित्य भडार के माध्यम से सुधी जनता तक पहुचाएंगे, हम अपने साहित्यकार सदस्यो को यह भी बताते रहेंगे कि अमुक समय में साहित्य के कौन से ट्रेड की अधिक माग है, जिससे साहित्यकार माग के अनुसार पूर्ति कर सकेंगे । जनता की मांग के अनुसार लिखने वाले साहित्यकारों को एडवास देने की व्यवस्था की जाएगी ।

आपका शुभचिंतक
सी० एल० जायसवाल

अब जायसवाल साहब स्वय निराला साहित्य भंडार पर बैठने लगे ।

उन्होंने इस भंडार का रीशफलिंग कर दिया। हर विधा के लिए एक-एक अलग-अलग 'इंचार्ज' बना दिए—जन्मोत्सव, विवाहोत्सव, शोक-गीत आदि विभाग। हर काउण्टर पर सुन्दर महिला नियुक्त की गई। उसके पीछे के कमरे में विभिन्न कवियों को नौकर रखा गया, जो विभिन्न प्रकार की कविताएं बनाकर लोगों की मांगों को पूरी करते थे।

जायसवाल साहब की इस सेवा से समाज को बड़ा लाभ हुआ। जो कवि अभी तक दो जून की रोटी को तरसते थे, उनकी तुकांत और अतुकांत कविताओं को विभिन्न अवसरों पर पढ़ा जाने लगा। जायसवाल साहब ने अपने ग्राहकों को और अधिक विशेषीकृत सुविधाएं देने के विचार से एक और *प्रावधान रखा कि अब अवसर के अनुकूल कवि भी भेजा जा* सकेगा।

होनी को कौन टाल सकता है। निराला साहित्य भंडार जब अपने चर्मोत्कर्ष पर था, एक घटना घट गई। जायसवाल साहब अपने पुत्र व पत्नी सहित अपने साले की लड़की की शादी में अन्य नगर चले गये। वे दुकान का कार्यभार एक विश्वासपात्र नौकर के सुपुर्द कर गए। उन्होंने नौकर को समझा दिया कि आर्डर मिलने पर सम्बन्धित कवि को ग्राहक के पते पर भेज दे।

रजिस्टर मे दर्ज एक पते पर एक कवि अपनी रचना सहित पहुंचे और शोक-गीत गाने लगे। पहले तो आयोजक और श्रोता हक्के-बक्के रह गये, फिर यह सोचने लगे कि शायद कविता का अन्त स्वागत गीत मे हो। पर ऐसा नही हुआ। आयोजक ने कवि का कालर पकड़कर कहा—"मैंने *स्वागत गीत पढ़ने के लिए पैसे दिए थे, शोकगीत भिनभिनाने के लिए* नहीं। तुमने तो मेरी लुटिया डुबा दी। कम-से-कम अब तो स्वागत गीत की कुछ पंक्तियां सुना दो।"

कवि ने उत्तर दिया, "मैं केवल शोकगीतो का ही स्पेशलिस्ट हू, मैं स्वागत-गीत नही गाता। मुझे मेरे मालिक ने शोकगीत के लिए भेजा था। यदि आपको कोई शिकायत है तो मेरे मालिक से मिलकर दूर कीजिए।" यह कहकर कवि महोदय नाजुक स्थिति को देखते हुए वहां से खिसक लिये, जिस व्यक्ति का शोक समारोह हो रहा था वह विपक्षी पार्टी का नेता था।

शोक सभा में आए लोगों को आशका हुई कि यह गड़बड़ आयोजकों ने सत्ता पार्टी के प्रभाववश जानबूझकर की है। जब वे लोग आयोजकों को मारने-पीटने के लिए उतारू हो गए तब आयोजकों ने अपनी सफाई में कहा—यह कवि तो हम किराये पर जायसवाल साहब के निराला साहित्य भण्डार से लाए थे। लोगों ने शका व्यक्त की कि जायसवाल साहब सत्ता पक्ष के व्यक्ति हैं और इसीलिए उन्होंने शोक सभा में स्वागत-गीत पढ़वाकर हमारे नेता का अपमान किया है। बातों-बातों में आक्रोश बढ़ गया और वह भीड़ चल दी निराला साहित्य भंडार को आग लगाने।

हुआ यूं था कि सेठ जी के नौकर ने रजिस्टर में ग्राहक का नाम व पता तो ठीक लिखा था, पर गलती से जिस ग्राहक के पास स्वागत गीत का कवि भेजना था, वहां शोकगीत का कवि भेज दिया। परिणामतः दूसरे स्थान पर जब कवि ने शोक सभा में स्वागत-गीत पढ़ा तो आगन्तुक हक्के-बक्के रह गये और कवि को मारने दौड़े। स्वागत-गीत वाले कवि ने अपनी सफाई में कहा, "हमको तो निराला साहित्य भंडार ने स्वागत-गीत गाने को भेजा था। हम अपने मालिक के नौकर हैं, आपके नहीं।" यह भी कवि चकमा देकर खिसक आए। जब शोक सभा में आए व्यक्ति आयोजकों को मारने पर उतारू हुए तो उसने भी उसका रोष निराला साहित्य भण्डार की ओर अग्रेपित कर दिया। इस प्रकार इधर से भी एक भीड़ चल दी निराला साहित्य भण्डार को जलाने के लिए।

दोनों भीड़ें जब निराला साहित्य भण्डार पहुंची तो दोनों में झगड़ा हो गया—इस बात पर कि वे पहले आग लगाएंगे। परिणामस्वरूप दोनों भीड़ें आपस में भिड़ गईं और खून-खच्चर होने लगा। थोड़ी देर में पुलिस आ गई और भीड़ को तितर-बितर करने के लिए पहले अश्रु गैस छोड़ी गई और फिर लाठीचार्ज किया गया। परिणामस्वरूप दोनों भीड़ें छट गईं। तमाशबीन दर्शक भी सिर पर पांव रखकर भाग गये। निराला साहित्य भण्डार के कर्मचारी भी डर के मारे भाग खड़े हुए। शेष रह गये पुलिस के कुछ जवान। इन सबको देखता हंस रहा था निराला साहित्य भण्डार का बोर्ड, जो अविचलित था और अट्टहास कर रहा था सेठ पर, जो साहित्य का व्यापार कर रहा था, उस जनता पर जो साहित्य के व्यापार से लाभ उठाना चाह रही थी, और पुलिस पर, जो उसकी रक्षा कर रही थी।

## छपना अखबार में फोटो का

बचपन में जब से होश संभाला, घर में अखबार देखता रहा। पढ़ना नहीं आता था, पर तस्वीरें तो देख ही लेता था। उस समय से इच्छा थी कि मेरा भी फोटो अखबार मे छपे। मैंने अपनी इस इच्छा को पिता के सामने कई बार प्रकट किया। उन्होंने मेरा फोटो कई पत्र-पत्रिकाओ मे भेजा, पर कहीं भी छप न सका। छपता भी कैसे? न तो मैं इतना सुन्दर था कि उससे पत्र-पत्रिका की शोभा बढ़ती और न ही इतना स्वस्थ कि स्वास्थ्य प्रतियोगिता वाले ही उसे छपवा देते। मेरी बहुमुखी (?) प्रतिभा भी किसी पत्र-पत्रिका को गौरवान्वित करने मे असफल थी।

समय बीतता गया। किशोर से जवान भी हो गया। इस अवधि में सैकड़ो कविताएं लिख डाली। पर एक भी कविता किसी सम्पादक को तो क्या, किसी लड़की को भी प्रभावित न कर सकी, हां, दोस्त अवश्य मेरे नाश्ते के लालच में उन कविताओं की भूरि-भूरि प्रशंसा कर दिया करते।

सौभाग्य से मेरा विवाह एक मंत्रीजी की सुकन्या से हो गया। नतीजा यह हुआ कि अगले चुनाव में मुझ जैसे प्रतिभाशाली को सत्ता पार्टी का टिकट मिल गया और बिना जेल गए हुए ही विधायक चुन लिया गया। चुनाव परिणाम घोषित होते ही मेरे कई फोटो लिये गए। क्षेत्र के सभी समाचार-पत्रों में मेरे फोटो छपे। फोटो के साथ मेरा परिचय भी था, जिसकी संक्षिप्ति कुछ इस प्रकार थी। आरम्भ मे बहुत प्रतिभाशाली छात्र, खेलकूद में हमेशा इनाम पाते रहे, एक अच्छे कवि, पर सकोचवश कभी कोई रचना छपने ही नहीं भेजी, एक अच्छे गृहस्थ, समाज-सेवी, ओजस्वी वक्ता, आदि, आदि।

दूसरे दिन जब पेपर मेरे घर पर आया, तब उसमें एक फोटो के साथ मेरा परिचय छपा था। घर के सभी लोगों ने मेरा ध्यान उस ओर आकर्पित किया। जब मैंने अखबार देखा, तब मैं न तो अपना फोटो पहचान पाया और न ही अपना परिचय। फोटो में मैं एकदम चुस्त और अपनी उम्र से दस साल छोटा लग रहा था। उस दिन मुझे पता चला कि मैं कितना सुन्दर, कितना स्वस्थ, कितना प्रतिभाशाली और कितना बड़ा कवि हूं। मुझे लगा कि मेरे घर का दर्पण कितना घटिया है। मेरा प्रतिनिधित्व मुझसे अधिक मेरा फोटो कर सकता है। मुझसे जो भी मिलने आता, मेरे एम० एल० ए० होने की बधाई तो देता ही, साथ ही मुझसे अधिक मेरे फोटो की तारीफ करता।

जब बहुत रात को मिलने-जुलने की आमदोरफ्त समाप्त हुई, तो मैंने अपना फोटो बार-बार देखा, अपने बारे में बार-बार पढ़ा, कितना अच्छा लगा, यह सब वर्णनातीत है। बार-बार देखा, बार-बार सराहा। ऐसा लगा कि मैं अपने बारे में अभी तक कितना अनभिज्ञ था। इन पेपरवालों ने तो मेरे ज्ञानचक्षु खोल दिए। इससे मुझे आत्मज्ञान प्राप्त हुआ। हमारे ऋषि-मुनियों को कठोर तपस्या के बाद आत्मज्ञान प्राप्त होता था, क्योंकि उस समय अखबार वाले नहीं थे। उन्हें अपने को समझने में कई वर्ष लग जाते थे। हे पेपरवालों ! तुम धन्य हो। मैं बार-बार तुम्हारी स्तुति करता हूं, क्योंकि तुमने मुझे आत्मज्ञान दिया तथा मेरे ज्ञान-चक्षु खोलने की कृपा की।

# राजा हरिश्चंद्र की औलाद

सारे संसार मे प्रजातंत्र की लहर आने पर राजा हरिश्चंद्र ने गद्दी त्याग दी और उन्होंने अपने देश में भी प्रजातंत्र की घोषणा कर दी। वर्षों तक प्रजातंत्र सलीके से चलता रहा, क्योंकि हर बार सत्ता पार्टी जीतती रही। धीरे-धीरे विरोधी पक्ष भी पनपने लगा। अब सत्ता पार्टी को लगने लगा कि उनको भी जनता से खतरा है। अतः उसने लोकप्रियता के कई अन्य तरीके ढूंढ़े। उदाहरण के लिए, भारत मे राजा को सदैव ही लोकप्रिय माना जाता है, अत. उनको या उनके वारिसों को टिकट देना, जिस धर्म या जाति का जिस चुनाव क्षेत्र में बहुमत है, उस धर्म या जाति के उम्मीदवार को खड़ा करना, आदि, आदि।

इसी सिलसिले में सत्ता पार्टी के सचिव राजा हरिश्चंद्र के पास आए और कहने लगे, "हुजूर! आप हमारी पार्टी की तरफ से अगले चुनाव मे खड़े हो जाइए। जीत निश्चित है। हम आपकी सत्यप्रियता पर ही वोट ले लेंगे।" राजा हरिश्चन्द्र ने उत्तर दिया, "मैं अब बुड्ढा हो चला हूं। आज की राजनीति मेरी समझ में भी नही आती।" राजा हरिश्चन्द्र ने सोचा कि अपने घर आए हुए व्यक्ति को निराश नही करना चाहिए। अतः उन्होंने सचिव से कहा, "यदि तुम चाहो तो मेरे पुत्र रोहित को चुनाव में खड़ा कर दो।" सत्ता पार्टी के सचिव ने सोचा, "सौदा बुरा नही है। बाप के पुण्य कर्मों का फल भारतीय जनता संतान को भी देना जानती है।"

रोहित उस स्थान से भी चुनाव जीत गया, जहां से सत्ता पार्टी को इस बार जीतने की आशा नहीं थी। उसकी लोकप्रियता के मुआवजे के रूप

में रोहित को गृह-मंत्री बनाया गया। कुछ समय बाद रोहित के चुनाव क्षेत्र में सांप्रदायिक दंगा हुआ। सौ से अधिक लोग मारे गए। विरोधी पक्ष ने इस मामले को लेकर सरकार के विरुद्ध अविश्वास प्रस्ताव रखने का फैसला किया। इस विकट परिस्थिति का सामना करने के लिए कैबिनेट की मीटिंग बुलाई गई। उस मीटिंग में यह तय किया गया कि गृह-मंत्री अपने वक्तव्य में कहेंगे कि केवल दस व्यक्ति मारे गए। यदि विरोधी पक्ष न्यायिक जांच की मांग करे, तो गृह-मंत्री थोड़ी आनाकानी के बाद अमुक न्यायाधीश की अध्यक्षता में एक न्यायिक कमीशन की घोषणा कर सकते हैं। रोहित ने सदन में झूठ बोलने से इन्कार कर दिया। मीटिंग में मंत्रियों ने रोहित पर बड़े व्यंग्य-बाण छोड़े, "बड़ा आया हरिश्चन्द्र की औलाद! राज-नीति में कहीं सच चलता है, यह तो अपनी नैया डुबो देगा।" रोहित डटा रहा।

उसी रात को रोहित से इस्तीफा ले लिया गया।

रोहित उदास-उदास रहने लगा। राजा हरिश्चन्द्र से अपने पुत्र की यह दशा देखी न जाती। एक दिन राजा हरिश्चंद्र ने रोहित से कहा, "बेटा, कुछ तो करो। अपना कोई मौरूसी धंधा तो है नहीं। अब तो प्रिवीपर्स भी नहीं मिलता। राजनीति में ही रहना है तो सत्ता पार्टी ही थोड़े ही है, विरोधी पक्ष में चले जाओ।" रोहित इतने दिनों राजनीति में रहा, अतः उसको भी पॉलिटिक्स का चस्का लग गया था। उसने भी सोचा कि वह अपने पिता के कारण लोकप्रिय तो है ही, क्यों न विरोधी पक्ष में ही शामिल हो लिया जाए।

रोहित ने विरोधी पक्ष में शामिल होने की अर्जी दी। विरोधी पक्ष ने इस मुद्दे को अपनी कार्यकारिणी की बैठक में रखा। एक सदस्य ने जानना चाहा कि रोहित किस जाति का है। अध्यक्ष ने बताया कि राजवंश से है तो क्षत्रिय ही होगा। प्रश्नकर्ता ने जानना चाहा कि यदि क्षत्रिय है, तो अपने नाम के आगे सिंह क्यों नहीं लगाता?

. एक सदस्य ने जानना चाहा कि वह अपनी पार्टी के लिए कितना चंदा दे सकेगा। अध्यक्ष ने बताया कि उसके पिता सत्यवादी होने की जिद के

कारण संपत्ति नही जोड़ पाए, ऐसे भुक्खड़ बाप का लड़का हमारी पार्टी को क्या दे पाएगा?

एक अन्य सदस्य ने कहा, "यदि रोहित के पास 'मनी पावर' नहीं है, तो 'मसल पावर' तो होगी ही। उसने जरूर ही अपने मंत्री-पद-काल में गुंडों को विभिन्न प्रकार के लाभ देकर पाला होगा। यदि वह उन सब गुंडों को लेकर हमारी पार्टी में आ जाए, तो हमारी पार्टी को काफी लाभ होगा। बूथ पर कब्जा करने तथा विरोधी पक्ष के लोगों को वोट न डालने देने में यह शक्ति हमारे बहुत काम आएगी।"

रोहित की गुप्त रिपोर्ट के आधार पर अध्यक्ष ने सभी सदस्यो को अवगत कराया, "रोहित ने अपने मंत्री-पद-काल में असामाजिक तत्वो को कोई तरजीह नही दी थी। इसके विपरीत गुडे तो उनसे खार खाए बैठे हैं क्योंकि उसने पुलिस को सख्त हिदायत दे रखी थी कि गुडो को राजाश्रय न दिया जाए।"

इन सभी बातों से सभी सदस्यो को बड़ी निराशा होने लगी थी, तभी एक जागरूक सदस्य ने पूछा, "रोहित और उसके पिता पौराणिक नाम हैं। क्या वे अपने नाम का प्रभाव वोट दिलाने मे कर सकेंगे?"

अध्यक्ष ने बताया, "रोहित सेक्यूलर है। वह चुनाव जीतने के लिए ऐसा कुछ नहीं होने देगा।"

एक अन्य सदस्य ने जानना चाहा, "क्या रोहित कोई समाचारपत्र निकालता है या उसके हाथ मे कोई पेपर है, क्योंकि चुनाव जीतने के लिए कुछ पेपर अपने पक्ष में होना जरूरी है।"

गुप्त रिपोर्ट के आधार पर अध्यक्ष ने अवगत कराया, "रोहित के प्रभाव मे कोई पेपर नहीं है।"

कार्यकारिणी के एक वरिष्ठ और प्रभावी सदस्य ने सभी सदस्यों को संबोधित करते हुए कहा, "ऐसा लगता है कि चुनाव जीतने की कोई भी अर्हता रोहित के पास नहीं है। अब, अध्यक्ष महोदय, इस बात पर अवश्य प्रकाश डालें कि रोहित को सत्ता पार्टी से क्यो निकाला गया था।"

अध्यक्ष ने बताया, "वह सदन में अपने पार्टी की इज्जत बचाने के लिए भी झूठ बोलना नहीं चाहता था।"

थोड़ी देर मंत्रणा के बाद सभी सदस्यों ने एक स्वर में कहा, "ऐसे हरिश्चन्द्र की औलाद का हमारी पार्टी भी क्या करेगी, आखिर हमें भी तो चुनाव जीतना है।"

इस प्रकार रोहित की अर्जी विरोधी पक्ष ने भी नामंजूर कर दी।

# एकलव्य पी-एच० डी० के चक्रव्यूह में

एकलव्य को पता चला कि भारत मे प्रजातंत्र आ गया है और सभी को समानता का दर्जा मिल गया है। अतः उसने भगवान से निवेदन कर पुनर्जन्म ले लिया। प्रतिभाशाली तो वह था ही, अतः उसकी इच्छा हुई कि विश्वविद्यालय की सबसे सम्मानित डिग्री पी-एच० डी० करके ही चैन की सांस ली जाए।

प्रथम श्रेणी मे एम० ए० प्राइवेट पास करने के बाद साधनहीन एकलव्य ने पी-एच० डी० के लिए विषय तथा निदेशक की तलाश मे एक नगर मे अपना डेरा जमाया। एक दिन वह सहायता के लिए अपने मामा के मित्र सज्जन सिंह के घर पहुंचा। औपचारिक बातचीत के बाद सज्जन सिंह ने एकलव्य से पूछा, "आप किस विषय में पी-एच० डी० करना चाहते है और क्यों ?"

"सर, मैं हिन्दी मे पी-एच० डी० करना चाहता हूं। मैं अपने विषय में महारत हासिल करने के लिए पी-एच० डी० करने का इच्छुक हूं।"

"यदि ऐसा है तो आप विदेश से पी-एच० डी० क्यों नही करते ?"

एकलव्य ने प्रतिप्रश्न किया, "भारत में क्यों नही ?"

"देखिए, हमारे यहां तो यह मान्यता है कि लेखक की चोरी को साहित्यिक चोरी अर्थात 'प्लेजियरिज्म' कहते हैं। किन्तु कई लोगो की चोरी कर गड्डमड्ड कर अपने नाम से लिखने को शोध कहते हैं जिस पर विश्वविद्यालय पी-एच० डी० की डिग्री प्रदान करते हैं। यहा पी-एच०डी० करने और कराने में इतना भ्रष्टाचार है कि…कि…"

"कि क्या ?"

"कि शरीफ ईमानदार छात्र तो कभी-कभी मैदान छोड़कर भाग जाता है। आजकल तो पी-एच०. डी० का मतलब 'परफेक्ट इन हाई डिप्लोमेसी' है।"

"डिप्लोमेसी कैसी ?" एकलव्य ने उत्सुकता दिखाई।

"वह ऐसे कि आप गाइड को भी पटा सकें और विश्वविद्यालय राजनीति मे गाइड के जो शत्रु हैं उनको भी पटा सकें।" सज्जन सिंह ने समझाते हुए कहा।

"क्या सभी टीचर अच्छे गाइड नही होते ?" एकलव्य ने जानना चाहा।

"अच्छा गाइड आजकल उसको समझा जाता है जो शोध-छात्र को यह बताता है कि किस लेख से कितनी चोरी करनी है और उनका कितना भाग उद्धरण चिह्नों के बीच रखना है। एक बार छात्र ने ज्यादा होशियारी दिखाई और मौलिक लेखन किया। नतीजा यह हुआ कि उसका शोध-प्रबध अस्वीकृत हो गया। परीक्षक ने अपनी रिपोर्ट में लिखा कि छात्र ने दूसरे लेखकों को पढा ही नही है। शोध-प्रबध मे उद्धरणो का न होना इस बात को सिद्ध करता है।" सज्जन सिंह बडे रुचिकर ढग से यह सब बयान कर रहे थे।

"सर, मैं चलता हू। मुझे लगता है कि मैं पी-एच० डी० नही कर पाऊंगा।" एकलव्य ने निराश होकर कहा।

"नही भाई नही, इतनी जल्दी हथियार मत डालिये। मैं आपको ठीक से गाइड करता हूं।" सज्जनसिंह ने एकलव्य से ढाढस बंधाते हुए कहा।

"आप गाइड करेंगे ?"

"हां, मैं गाइड करूंगा। अपने नगर मे हिन्दी में पाच रिकॉग्नाइज्ड गाइड हैं। डॉ० तिवारी, डॉ० शास्त्री, डॉ० जैन, डॉ० सिंह और प्रोफेसर वर्मा। आप इन लोगों मे मिल तो लीजिए।"

एकलव्य ने इन सब प्रोफेसरो के पते नोट किए और अपने कमरे पर आ गया। दूसरे दिन वह सबसे पहले हिन्दी के विभागाध्यक्ष डॉ० तिवारी के घर पहुचा। डॉ० तिवारी अपनी बैठक में दो सुन्दर छात्राओं के बीच बैठे रीतिकालीन कविता पर रस ले-ले कर बोल रहे थे। छात्राएं मूक

श्रोता बनी अपनी मुस्कराहटों से उनकी एकपक्षीय वार्ता में सक्रिय भाग लेने का अभिनय कर रही थी।

डॉ० तिवारी ने एकलव्य का परिचय व आने का उद्देश्य पूछा। एकलव्य के उत्तर के बाद तिवारी जी ने कहा, "बेटे, मेरे पास जगह नहीं है। अगले वर्ष वसुंधरा (सामने बैठी एक लडकी की ओर इशारा करते हुए) अपना शोध-प्रबंध जमा करेगी, तब मैं तुम्हें ले लूंगा।"

"सर, तब तक मैं क्या करूं?"

"अरे, करना क्या है, मौज करो मौज।"

"सर, मेरे पास फीस देने तक को पैसा नहीं है। मैं क्या मौज कर पाऊंगा?" एकलव्य ने गम्भीर होकर कहा।

"यदि गरीब हो तो मैं तुम्हें काम दे सकता हूं।"

"सर, मैं कोई भी काम करने को तैयार हूं। आप काम बताइए।"

"मैं कुछ पुस्तकें लिख रहा हूं। तुम कुछ मदद कर दिया करो। अच्छा, पहले यह तो बताओ कि हिन्दी ठीक-ठाक लिख लेते हो।"

"सर, मैं एम० ए० हिन्दी प्रथम श्रेणी हूं।"

"यह तो ठीक है। पर प्रथम श्रेणी से क्या अच्छी और शुद्ध हिन्दी लिखना आ जाती है। यह शकुंतला (दूसरी लडकी की ओर इशारा करते हुए) भी तो दूसरे राज्य के एक प्रतिष्ठित विश्वविद्यालय की फर्स्टक्लास फर्स्ट और गोल्ड मेडलिस्ट है। पर हर पृष्ठ पर कम-से-कम दस गलतियां करती है।" तिवारी जी ने उपहास करते हुए कहा।

"सर, फिर इनको स्वर्ण-पदक कैसे मिल गया?"

"मिल क्या गया, दिला दिया गया। इनके पिताजी कुलपति थे। यहां के हिन्दी के विभागाध्यक्ष को रीडर से प्रोफेसर बनना था। बस दोनों में समझौता हो गया।" यह कहकर वे हंस दिए।

एकलव्य ने साहस बटोर कर कहा, "सर, यह पी-एच० डी० अपने विश्वविद्यालय से ही क्यों···"

तिवारी जी ने बीच में ही टोकते हुए कहा, "अब इनके पिताजी कुलपति नहीं रहे। अरे भाई, प्रजातंत्र है। इनके केस ने भी तूल पकड़ लिया। इनके पिता को त्यागपत्र देना पडा। यह तो अच्छा हुआ कि इनकी

शादी यहां के एक व्यापारी से हो गई। अतः यह पी-एच० डी० हमारे यहां से ही कर रही हैं। खैर, यह छोड़ो, काम की बात करो।"

एकलव्य ने तत्काल कहा, "सर, मेरी हिन्दी अच्छी है। आप चाहें तो लिखवाकर देख लीजिए।"

"इसकी कोई आवश्यकता नही है।" तिवारी जी इतना ही कह पाए कि एक लेक्चरर-नुमा व्यक्ति ने कक्ष में प्रवेश किया और तिवारी जी के चरण स्पर्श किए। तिवारी जी ने एकलव्य की ओर मुखातिब होकर कहा, "यह मेरे विभाग मे रीडर है रीडर। पैर छूता है।" तिवारी जी ने यह बात कुछ इस ढग से कही कि एकलव्य को अपनी भूल का अहसास हो गया। उसने भी तिवारी जी के तत्काल पैर छू लिये। तिवारी जी बहुत प्रसन्न हो गए। आशीर्वाद देते हुए तिवारी जी ने उसे रविवार को आने को कहा।

अगले दिन एकलव्य ने सज्जन सिंह को तिवारी जी की मुलाकात के बारे मे बताया। सज्जन सिंह ने छूटते ही कहा, "आप उनके लिए पुस्तक लिखने को तैयार हुए कि नही?"

"हां।"

"आपने उनके पैर छुए?"

"हां, पर आपको ये सब कैसे मालूम?"

"मुझे कैसे मालूम! यह तो नगर का हर हिन्दी वाला जानता है। हां, एक बात जरूर है कि तिवारी जी अपने छात्रों की सुविधा के लिए सोफा की टेबल पर पैर फैलाकर बैठते हैं।" सज्जन सिंह ने हंसते हुए कहा। फिर गम्भीर होकर सलाह दी, "आप वहां से खिसक लीजिए।"

एकलव्य ने सज्जन सिंह की सलाह मान ली और दूसरे दिन डॉ० शास्त्री के घर पहुंचा। शास्त्री जी का कमरा शराब की गंध से भरा हुआ था और शास्त्री जी मधुशाला की पंक्तियां गुनगुना रहे थे। एकलव्य को यह अच्छा नहीं लगा। अतः बिना कुछ काम की बात किए वहां से चला गया। बाद में सज्जन सिंह ने बताया, "डॉ० शास्त्री अखिल भारतीय स्तर के विद्वान हैं। वे गाइड भी अच्छा करते हैं। हां, लड़कों से अंग्रेजी शराब

की बोतलें जरूर मंगाते है। यदि आप ऐसा कर सकें तो पजीयन करा लीजिए।"

विचार करने के बाद एकलव्य ने शास्त्री जी के यहां न जाना ही उचित समझा। अगले दिन वह डॉ० जैन के घर पहुंचा। एकलव्य का मंतव्य जानकर जैन जी ने स्पष्ट शब्दों में कहा, "आजकल मैं किसी को गाइड नहीं करता।"

"क्यों, सर।" एकलव्य ने साहस बटोर कर पूछा।

"आजकल अच्छे छात्र मिलते ही नहीं। एम० ए० करने के बाद लड़कियां इसलिए पंजीयन करा लेती हैं कि जब तक शादी न हो, पी-एच० डी० ही करें। लड़के जब तक कोई नौकरी नहीं मिलती, पी-एच० डी० करते रहते हैं। अगर कहीं क्लर्की भी मिल गई तो पी-एच० डी० करना छोड देते हैं। उन पर की गई मेरी सब मेहनत बेकार चली जाती है। दूसरे, मैं यह भी सोचता हूं कि पी-एच० डी० कराने से मुझे तो कोई लाभ होता नहीं, फिर क्यों दिमाग खपाऊं? मेरे निदेशन में आठ पी-एच० डी० हो गए और मैं लेक्चरर से रीडर तक नहीं हो पाया। हमारे विभागाध्यक्ष के निदेशन में तो कोई पी-एच०डी० हुआ ही नहीं और वे प्रोफेसर हो गए। अतः मेरा मन ही उचट गया। सॉरी, एकलव्य जी।"

एकलव्य निराश होकर वहां से लौट आया और डॉ० सिंह के घर पहुंचा। डॉ० सिंह ने पूछा, "किस विषय पर काम करना चाहते हो?"

"सर, नई कविता पर।"

"ठीक है। सिनॉपसिस स्वयं बना लोगे?"

"हां, सर।"

"तुम तो बहुत होशियार मालूम पड़ते हो। विषय भी तुम्हारा और सिनॉपसिस भी तुम्हारी। फिर मेरे निदेशन की क्या आवश्यकता पड़ गई?" डॉ० सिंह व्यंग्यात्मक स्वर में यह कहने के बाद कुछ क्षण रुके, फिर बोले, "यह ध्यान रखना कि यदि सिनॉपसिस रिजेक्ट हो गई, तब मुझसे कुछ मत कहना।"

एकलव्य इस वाक्य का अर्थ समझ नहीं पाया। अतः खामोश हो गया। डॉ० सिंह ने खामोशी को भंग करते हुए कहा, "ठीक है। फुर्सत में

आना। विभाग में ही मिल लेना।"

एकलव्य को सिंह साहब के रूक्ष व्यवहार से बहुत निराशा हुई। जब उसने यह सब कुछ सज्जन सिंह को बताया, तब उन्होंने स्पष्टीकरण दिया, डॉ० सिंह स्वयं विषय बताते हैं और स्वयं सिनॉपसिस लिखते हैं। हां, इसका वे पैसा लेते हैं। खैर, अब आप इनका चक्कर छोड़िए और प्रो० वर्मा को ट्राई कर लीजिए।"

"क्या वर्मा जी डॉक्टर नहीं है ?" एकलव्य ने जिज्ञासा व्यक्त की।

"नहीं।"

"तो वे प्रोफेसर कैसे बन गए ?"

"वे लेक्चरर हैं और यहां के विभागाध्यक्ष को ब्लैकमेल करके लेक्चरर बन गये हैं।"

"यह कैसे हो सकता है !" एकलव्य ने आश्चर्य व्यक्त किया।

सज्जन सिंह ने बड़ी सहजता से बताया, "हां, ऐसा हुआ है। वर्मा जी ने विभागाध्यक्ष के शोध-प्रबंध में कुछ भयंकर गलतियों को निकाला और उसके स्तेय अंशों को समाचार पत्रों में प्रकाशित करने की धमकी दी। बुढ़ापे में अपनी पोल खुलती देख उन्होंने वर्मा जी को चुप करने के एवज में अपने विभाग में लेक्चरर बनवा दिया।"

"हे भगवान, मैं तो ऐसे व्यक्ति के निदेशन में काम नहीं करना चाहता जो स्वयं पी-एच० डी० न हो।" इतना कहकर एकलव्य दुखी मन अपने मकान की ओर चल दिया। लोकल बस में अपने घर आते समय एकलव्य की मुलाकात सुजय नाम के एक शोध-छात्र से हो गई। उसने कल ही अपना शोध-प्रबंध जमा किया था। बातों-बातों में एकलव्य के मुंह से अनायास निकल गया, "पी-एच० डी० में तो बहुत भ्रष्टाचार है।"

सुजय ने बड़ी विनम्रता से कहा, "यह तो दृष्टिकोण की बात है कि आप भ्रष्टाचार किसे कहते हैं। मैं ऐसे कई विदेशी छात्रों को जानता हूं जो खाड़ी देश से यहां केवल तफरीह करने आए हैं। वे ही निदेशकों को धन और महंगे उपहार देकर भ्रष्ट करते हैं।"

"भ्रष्ट निदेशकों के विरुद्ध कुछ कार्रवाई नहीं होती ?"

"सारंजाई कौन करेगा ? कुलाधिपति और कुलपति के बच्चे, यहां तक कि मुख्यमंत्री स्वयं पी-एच० डी० के लिए पंजीयित है। ऐसे छात्र निदेशकों से नाजायज फायदा उठाते हैं और बदले में भ्रष्ट निदेशकों को अभयदान मिल जाता है।"

"क्या आपको भी कुछ देना पड़ा ?" एकलव्य ने संकोच करते पूछ ही लिया।

"नही भाई, मैं तो गरीब छात्र हूं। मैं कहां से देता ? हां, गुरुजी की सेवा अवश्य की।" मुजय ने निस्संकोच बताया।

"गुरु सेवा में क्या-क्या ?"

"निदेशक के बच्चों का स्कूल में दाखिला, उनकी कॉपियां जाचना, उनके मेहमानों की खातिर करना, रेलवे का रिजर्वेशन कराना, कभी-कभी भाटी के लिए सिनेमा के टिकट लाकर दे देना···"

एकलव्य ने बीच में ही टोकते हुए कहा, 'बस कीजिए। यह भी तो भ्रष्टाचार है।"

"मैंने पहले ही कहा कि यह तो दृष्टिकोण का अन्तर है। द्रोणाचार्य पर किसी ने भ्रष्टाचार का आरोप नहीं लगाया। उन्होंने तो एकलव्य को बिना शिक्षा दिए अंगूठे के रूप में ट्यूशन वसूल कर ली थी और आप मेरी सेवा को भ्रष्टाचार मान रहे हैं। मैंने तो ऐसा कभी नहीं सोचा। मुझे तो गुरु-सेवा में बड़ा आनन्द आता है। मैं तो अब उनके घर का सदस्य हो गया हूं। अपने घर में क्या अपने पिता जी का काम नही करते ?"

मुजय के इस अप्रत्याशित उत्तर से एकलव्य की बोलती बन्द हो गई। थोड़ी देर में एकलव्य का स्टॉप आ गया और वह बस से उतर गया।

अगले दिन एकलव्य सज्जन सिंह के घर गया और बोला, "अब मैंने सभी निदेशक देख लिये। अब मैं अपने गाव वापस जाना चाहता हूं।"

सज्जन सिंह ने ढाढस बधाते हुए कहा, "चलो, कुमार कोचिंग सेंटर में और ट्राई कर लेते है।"

"यह क्या बला है ?" एलकव्य ने पूछा।

"इस कोचिंग सेंटर को मिस्टर कुमार चलाते हैं। यहां हाई स्कूल से लेकर एम० ए० तक की क्लासेज तो चलती ही है। सुना है कि वे पी-एच० डी० दिलाने का ठेका भी लेते हैं। चलो, बात करके देखते हैं।"

"मुझे ऐसी जगह जाते अच्छा नहीं लगता।" एकलव्य ने कहा।

"अरे भाई, देखने में क्या हर्ज है? यदि यहां से पी-एच० डी० नहीं करना तो मत करना।" सज्जन सिंह ने समझाते हुए कहा।

थोड़ी देर में वे कुमार कोचिंग सेंटर पहुंचे। सेंटर में घुसते ही एक सुन्दर रिसेप्शनिस्ट ने उनका स्वागत किया। उनका उद्देश्य मालूम कर परिचारिका ने बताया, "मि० कुमार तो अभी नहीं आए हैं। आप उनके सचिव मि० विज्ञापन से मिल लीजिए।" इतना कहकर उसने एक कमरे की ओर इंगित किया।

एकलव्य और सज्जन सिंह उस कक्ष में पहुंचे। कक्ष बहुत ही सुव्यवस्थित और सुसज्जित था। सचिव ने उनका उद्देश्य जानकर दीवार पर टंगे एक चार्ट की ओर इशारा करते हुए कहा, "आप इसमें देखकर बताइए कि आप कौन सी श्रेणी में आते हैं?"

एकलव्य ने उस चार्ट पर नजर दौडाई। शोधकर्ताओं को कई वर्गों और उपवर्गों में बांटा गया था, जैसे—पुरुष-स्त्री, विवाहित-अविवाहित, देशी-विदेशी, कार्यरत-बेकार, कैरियर के लिए, शौक के लिए, शोध करने वाले, आदि-आदि। जब एकलव्य चार्ट देख रहा था, तब सज्जन सिंह ने मि० विज्ञापन से पूछा, "इस वर्गीकरण का लाभ क्या है?"

"देखिए, हर श्रेणी के रेट अलग-अलग हैं।" सचिव मि० विज्ञापन ने मुस्कराते हुए उत्तर दिया।

इतने में एकलव्य ने चार्ट देखकर अपनी श्रेणी बता दी। सचिव ने नोट कर लिया। उसके बाद सचिव ने एकलव्य को एक फार्म भरने को दिया। फार्म में नाम, पते के अतिरिक्त प्रमुख बातें इस प्रकार थीं—क्या विषय आपने चुन लिया है, सिनॉपसिस आप लिखकर देंगे या सेंटर से आशा करते हैं, कितने समय में डिग्री चाहिए, शोध-प्रबंध स्वयं लिखेंगे या सेंटर से आशा करते हैं, आदि-आदि।

फार्म भरकर एकलव्य ने सचिव को दे दिया। सचिव ने एक चार्ट देखकर हर एक के रेट कैलकुलेटर से जोड़कर बताया कि पच्चीस हजार रुपये लगेंगे। दस हजार एडवांस देना है और पंद्रह हजार तब समझ लेंगे जब आपको शोध-प्रबंध पर हस्ताक्षर करने बुलाया जाएगा।

सज्जन सिंह ने जिज्ञासावश पूछा, "जब आप ही सब करके देते हैं, तो शोध-प्रबंध मे छात्र का क्या रहता है?"

मि० विज्ञापन ने मुस्कराते हुए उत्तर दिया, "क्यों, शोध-प्रबंध में नाम तो छात्र का ही होता है।"

सज्जन सिंह ने जानना चाहा कि वे परीक्षको को किस प्रकार पटा लेते हैं।

"यह तो ट्रेड सीक्रेट है।" सचिव ने उत्तर दिया।

"फिर भी, मुझसे आपको क्या खतरा?"

"ठीक है, ऐसा है कि आरम्भ से ही हम हर स्तर पर प्रयत्न करते हैं कि उन परीक्षकों की नियुक्ति हो, जो हमारे है।"

"मान लीजिए कि कोई परीक्षक ईमानदार मिल जाए, तब आप क्या करते हैं?" सज्जन सिंह ने पूछा।

"इसके भी कई तरीके हैं। एक बार एक परीक्षक धन लेकर स्वीकृति देने को तैयार नही हुआ। फिर हमने उनके गुरु को पटाया और गुरु ने अपने शिष्य को आदेश दिया कि वे शोध-प्रबन्ध पर अपनी स्वीकृति दे दें।"

एकलव्य को वहा घुटन महसूस होने लगी। वह सज्जन सिंह को लेकर सेंटर के बाहर आ गया और राहत की सास ली। थोड़ी देर सड़क पर पैदल चलने के बाद सज्जन सिंह के कुछ मित्र मिल गये जो विश्वविद्यालय से संबंधित थे। सज्जन सिंह ने उन्हें एकलव्य की व्यथा बताते हुए कहा, "यार, आप लोगो के विश्वविद्यालय में तो बहुत भ्रष्टाचार है। एकलव्य जी को तो कोई ईमानदार गाइड ही नही मिल रहा है।"

इस आरोप का उत्तर दिया मिस्टर नारायण ने—"विश्वविद्यालय मे

बहुतेरे ईमानदार निदेशक है। किन्तु आज का छात्र उनके पास जाना पसन्द नही करता। आज का छात्र स्वयं ऐसा निदेशक चाहता है जो विश्वविद्यालय की सत्ता से जुड़ा हो और मिल-मिला कर छात्र को जल्दी डिग्री दिला दे।"

दूसरे मित्र मि० प्रसाद ने वात को आगे बढ़ाते हुए कहा, "विद्वान अध्यापको को जब अपने से अल्प शिक्षित डीन और कुलपति के अधीन काम करना पड़ता है, तब उनमें फस्टेशन उत्पन्न हो जाता है। इस कारण अध्यापक पढ़ाने और शोध पर ध्यान नही देता। वह देखता है कि पदोन्नति के आधार परतो काम रह नही गया। उसके लिए कुलपति, डीन और विभागाध्यक्ष की चमचागीरी ही काफी है।"

तीसरे मित्र मि० सहाय ने वातावरण को हलका बनाते हुए कहा, "अब हमारे मित्र जोशी (एक मित्र की ओर इशारा करते हुए) को ही देखिए। इनके निदेशक डॉ० पत ने तो इनसे कुछ लिया नही। फिर हम कैसे मान लें कि पी-एच० डी० मे भ्रष्टाचार है।"

इस पर प्रभाकरजी ने चुटकी लेते हुए कहा, "आप इनको 'कोट' मत कीजिए। यह एक अलग प्रकार का भ्रष्टाचार है।"

"क्या मतलब ?" सज्जन सिंह जी ने जिज्ञासावश पूछा।

"यह वात सही है कि पतजी ने जोशी जी से कुछ नही लिया और इनको अपने विभाग मे लेक्चरर भी बनवा दिया। पर इसके एवज मे उन्होने अपनी मोटी लड़की को इनके गले मढ दिया। जोशी उनके अहसान से इतने दवे थे कि न नही कर पाये। है न जोशी जी।"

इस पर सभी ठहाका मारकर हंसने लगे। तब तक एक चौराहा आ गया। एकलव्य और सज्जन सिंह एक ओर मुड़ लिये। दोनो ही दिग्भ्रमित दिख रहे थे। थोड़ी देर खामोशी रही। खामोशी को तोडा सज्जन सिंह ने, "एकलव्य, आप निराश न हों। यदि इस नगर मे कोई अच्छा निदेशक नहीं मिलता, तो आप दूसरे विश्वविद्यालय चले आइयें।"

एकलव्य ने उत्तर दिया, "इतने दिनो आपने मेरी मदद की। इसके लिए धन्यवाद। अब पी-एच० डी० का चक्रव्यूह मैं अकेले ही तोड़ूगा। द्रोणाचार्य तो हर युग में रहेंगे। किन्तु इस बार मैं अपना प्रतिभा रूपी

अंगूठा किसी को नही दूगा।"

अन्तिम वाक्य कहते समय एकलव्य के चेहरे पर रोप नही, तेज था। सज्जन सिंह जी ने भी आशीर्वाद के स्वर मे कहा, "द्रोणाचार्य जैसे लोग प्रतिभा को थोड़े समय के लिए 'चेक' भले ही कर दें, पर उसको स्थाई रूप से दबाया नही जा सकता।"

अगले चौराहे पर दोनों भिन्न रास्तों पर मुड़ लिये।

# पार्टी कल्चर

इस नगर के सेठ कुमार अपने राजनीतिक और सामाजिक सम्बन्धो के लिए जग-प्रसिद्ध हैं। जब भी कोई मत्री, मुख्य मंत्री या कोई बहुत बड़ा अफसर इस नगर मे आता है, वह कुमार बाबू के घर जरूर जाता है। संपर्कों को बढाने तथा बनाये रखने में कुमार बाबू की सुन्दर पत्नी उर्वशी का विशेष योगदान है।

उर्वशी की बचपन की सहेली उमा इसी नगर में आ गई है क्योकि उमा के पति प्रोफेसर तार्किक जी का स्थानातरण नगर के शासकीय महाविद्यालय मे हो गया है। उमा के आने से उर्वशी को बेहद खुशी हुई है क्योकि उसमे उसे एक अच्छा श्रोता मिल गया। उर्वशी उमा से मिलती बड़े आत्मीय ढंग से है, किन्तु उर्वशी के अचेतन मे रईसी का दम्भ इतना अधिक है कि वह न चाहते हुए भी उसकी बातों मे टपक जाता है। घनिष्ठ सम्बन्धो के कारण उमा यह सब कुछ जानते हुए भी बुरा नही मानती।

एक शाम उर्वशी ने उमा को फोन किया, "हलो उमा, कैसी हो?"

उत्तर मिला, "ठीक हूं। तुम सुनाओ, तुम कैसी हो?"

उर्वशी ने अलसाये हुए लहजे मे कहा, "क्या बताऊं, उमा, यह तो सुबह नौ बजे चले जाते हैं। मैं तो दिन भर बोर होती रहती हूं। अभी वी० सी० आर० पर दो इंग्लिश फिल्में देख कर उठी हूं।"

उमा ने पूछा, "अभी कैसे फोन किया? कोई खास बात?"

"हां, हम लोग अगले शनिवार को मल्टी-पर्पज पार्टी अरेंज कर रहे हैं। मोस्ट प्रोबेबली सी० एम० (चीफ मिनिस्टर) भी आयेंगे।"

"यह मल्टी-पर्पज क्या बला है?" उमा ने जानना चाहा।

"मल्टी-पर्पज यानी बहु-उद्देशीय।" इतना कहकर उर्वशी हंस दी।

"इतना तो मैं भी समझती हूं। पर इसके आगे भी बताओ कुछ?"

"अच्छा सुनो, अगले शनिवार को सुबह मेरे बेटे पीयूष का पट्टी पूजन है, दोपहर को सत्य नारायण की कथा है और शाम को बड़े लोगों के लिए सोम रस पार्टी है। लेकिन यह याद रखना कि तुम्हें सुबह से ही आना है। हालांकि भाई साहब अगर शाम को आएंगे तो भी चलेगा।"

निमंत्रण के अनुसार उमा शनिवार की सुबह उर्वशी के घर पहुंच गई। उनके घर की शोभा देखते ही बनती थी। बंगले को एक नई नवेली दुल्हन के समान सजाया गया था। बाहर खड़ी दर्जनों देशी-विदेशी कारें अन्दर विराजमान मेहमानों के वैभव का संकेत दे रही थीं। घर के अन्दर पहुंचते ही कुमार और उर्वशी ने उमा का जोरदार स्वागत किया।

ठीक नौ बजे पंडित जी ने पीयूष के द्वारा पाटी-पूजन कराया। चूंकि उमा संस्कृत जानती थी। अतः पंडित का अशुद्ध उच्चारण उसे चुभ रहा था। पर इतनी भीड़ में उसने पण्डित जी से कुछ कहना उचित नहीं समझा।

पूजा के समय घर का वातावरण भारतीय लग रहा था। महिलाएं पारम्परिक वेश-भूषा में थीं। कुमार बाबू सफेद-बुर्राक धोती-कुर्ता और शाल में इधर-उधर डोल रहे थे। लगभग 12 बजे सत्यनारायण की कथा आरम्भ हुई। कुछ बूढ़े-बुढ़ियों को छोड़कर उस कथा को शायद ही कोई सुन रहा हो। यजमान कुमार बाबू भी इसके अपवाद न थे। वे पूजा पर अवश्य बैठे थे, फिर भी बीच-बीच में शाम की पार्टी से संबंधित निर्देश देते जाते थे।

उमा को यह सब कुछ अच्छा नहीं लग रहा था। उसने धीरे से उर्वशी से पूछा, "जब कथा में कोई रुचि नहीं ले रहा है तो कराई क्यों जा रही है?"

उर्वशी ने उमा के कान में कहा, "सिर्फ लोकाचार के लिए। जिन पड़ोसियों को हम लोग शाम की पार्टी में बुलाना नहीं चाहते, उनको इस कार्यक्रम में बुला लिया है। आखिर सम्बन्ध तो सबसे ही रखना पड़ता है।"

कुमार बाबू बीच-बीच मे पंडित जी को निर्देश देते जाते थे कि कथा जल्दी समाप्त की जाये। वे फोन आने पर बीच-बीच में बातचीत भी कर आते थे। आगंतुक भी अपने घर से लेकर कार्यालय तक की बातचीत में व्यस्त थे। स्थिति को देखकर पंडित जी ने शार्टकट मार दिया और प्रसाद वितरण का कार्यक्रम आरम्भ करा दिया। प्रसाद ग्रहण के लिए सब सचेत हो गए। कुछ दो-दो बार प्रसाद ग्रहण कर डबल पुण्य लूटने का सौभाग्य प्राप्त कर रहे थे। इसके बाद सब लोग अपने-अपने घर चले गये। उर्वशी ने उमा को तभी जाने दिया जब उसने शाम को जल्दी आने का वादा किया।

रात को 8 बजे उमा और उसके पति कुमार बाबू के घर पहुंचे। देशी-विदेशी शैली के मिले-जुले उपकरणो से घर को बड़े सुरुचिपूर्ण ढग से सजाया गया था। उच्च कोटि की तकनीकी विद्युत प्रकाश व्यवस्था ने चाद चन्द्र की चंचल किरणों के प्रकाश को फीका कर दिया था।

घर के अन्दर घुसते ही उर्वशी व उनके पति ने उनका गरमजोशी से स्वागत किया। अधिकतर लोग जोड़ो में आये थे। जिनकी पत्नियां नही थी वे अपनी किसी महिला मित्र के साथ आये थे। इक्के-दुक्के अकेलों को परोपकारी प्रवृत्ति की महिलाएं कम्पनी दे रही थी। अधिकतर महिलाएं पारदर्शी, नाभिदर्शना साड़िया व स्लीवलेस ब्लाउज में स्वर्ग की अप्सराओं को मात कर रही थी। शायद ये महिलाए गाधी जी के देश में कम वस्त्र पहिन कर कम-से-कम उनकी इस परम्परा को तो आगे बढ़ा रही थी।

परिचय होने पर प्रो० तार्किक पुरुषो से तो हाथ मिला रहे थे पर स्त्रियो से हाथ जोडकर नमस्कार कर रहे थे। वहा के वातावरण के लिहाज से यह बड़ा अटपटा लग रहा था। एक व्यक्ति से हाथ मिलाते समय उर्वशी ने चुटकी ली, "तार्किक भाई साहब, आप तो महिलाओं से हाथ नही मिलाते, फिर···"

प्रो० तार्किक ने बड़े गर्व से कहा, "मेरी दृष्टि मे यही उचित है।"

उर्वशी ने हंसते हुए कहा, "फिर, आपने अपना नियम भंग क्यों किया? आप अभी जिससे हाथ मिला रहे थे वे मेरी सहेली मिस एलिजाबेथ हैं।"

तार्किक यह सुनकर दंग रह गये। उनको उस तथाकथित महिला में स्त्रियोचित कुछ नहीं लग रहा था, न उनकी शारीरिक बनावट और न ही उनका परिधान। इससे अधिक वे बड़ी बेतकुल्लफी से अपनी सिगरेट का धुआं दूसरों के ऊपर छोड़ रही थी। प्रो० तार्किक ने उन्हें नीचे से ऊपर देखा कि शायद उनमें कहीं स्त्रियोचित लक्षण मिल जायें। उर्वशी ने उनका ध्यान भंग करते हुए कहा, "इतने गौर से मत देखिए। यह मिस जरूर हैं, पर इनको पटाना टेढ़ी खीर है।"

इतने में नौकर ने एक ट्रे उनके सामने पेश कर दी। एलिजाबेथ ने ट्रे में से ह्विस्की का एक गिलास उठा लिया। तार्किक जी उर्वशी की ओर देख कर मुस्कराने लगे। तभी उर्वशी ने नौकर को निर्देश दिया कि वह उनके लिए आरेंज ले आये।

लगभग 11 बजे पार्टी अपने पूरे शबाब पर थी। अधिकतर लोग नशे के कारण या शबाब के दीदार से उत्पन्न नशे के कारण झूमने लगे। बाहर लॉन में एक आर्केस्ट्रा पार्टी उछल-कूद मचा रही थी। कुछ मेहमान भी उनके साथ नाच कम, नाचने का अभिनय अधिक कर रहे थे। किन्तु कुछ होशियार लोग और व्यापारियों की आखें अपने मतलब के लोगों को ढूंढ़ रही थी। एक ओर सेठ कुमार मन्त्री महोदय से कुछ काम की बातें कर रहे थे। जब उर्वशी तार्किक जी को मन्त्री जी के पास परिचय हेतु ले गईं, तब उन्होंने तार्किक जी में कम और उर्वशी में अधिक रुचि दिखाई। वे बातों-बातों में उर्वशी के कधों पर बड़े सहज ढंग से हाथ रख देते, यद्यपि उर्वशी इसे अस्वाभाविक महसूस कर रही थीं। किन्तु कुमार जी पर इसकी कोई प्रतिक्रिया नहीं हो रही थी। उनका ध्यान तो इस बात पर केन्द्रित था कि मन्त्री जी से अधिक-से-अधिक क्या प्राप्त किया जा सकता है। उनके दिमाग में सेठ झुनझुनमल से किया हुआ वादा भी था। वे उनके लिए मन्त्री जी की सहायता से सरकारी जमीन सस्ते दामों पर हथियाने के चक्कर में थे।

भोजन में बफे सिस्टम था। भोजन का प्रबंध दो बड़े हॉलों में किया गया था—एक में सामिष और दूसरे में निरामिष। विभिन्न प्रकार के भोज्य पदार्थ पारम्परिक छत्तीस व्यंजनों की याद दिला रहे थे। पीने के

लिए शराब की इतनी किस्में थी कि यदि कोई गिनना चाहे तो भ्रमित हो जाये। प्रो० तार्किक का ध्यान न खाने में था और न पीने में। वे तो तटस्थ भाव से वहां का जायजा ले रहे थे।

तार्किक जी ने नोट किया कि पार्टी में तीन प्रकार के लोग थे। एक वर्ग तो पीने मे मस्त था। दूसरे वर्ग खाने की टेबल से हटना ही नही चाहता था। तीसरा वर्ग केवल जन-संपर्क बनाने मे लगा था। पार्टी मे ये ही लोग प्रमुख थे। ऐसे लोगो के हाथ मे यदि शराब का गिलास था भी तो वह संपर्क का साधन मात्र था। ऐसे लोग घटो हाथ में जाम लिये या प्लेट लिये अपने मतलब के आदमियो से काम की बातें कर रहे थे।

पार्टी मे महिलाएं भी तीन प्रकार की थी। कुछ महिलाओं की पार्टी मे कोई रुचि नही थी। वे केवल इसलिए आई थी कि उनके पति ऐसा चाहते थे, क्योंकि संभ्रांत वर्ग मे सुन्दर और सजी हुई पत्नी भी 'स्टेटस सिंबल' है। ऐसी महिलाओ के पति काम के लोगों से बातचीत में व्यस्त हो जाते हैं और ये बोर होती हैं। अतः समय काटने के उद्देश्य से उनकी आपसी चर्चा के विषय थे आभूषण, वस्त्र या आयातित महगे सौंदर्य-प्रसाधन। कुछ महिलाएं पार्टी में इसलिए आई थी कि वे अपने कीमती पोशाकों और आभूषणो से दूसरो को प्रभावित कर सकें। तीसरे वर्ग की महिलाएं पार्टी में सोद्देश्य आई थी। वे संपर्क के द्वारा अपने स्वार्थ की सिद्धि मे व्यस्त थी। इसी वर्ग की कुछ महिलाएं अपने पति के 'बिजनिस इंट्रेस्ट' या 'प्रोमोशन इंट्रेस्ट' को पूरा करने मे एजेंट का काम कर रही थी। ऐसी महिलाएं बहुत 'बोल्ड' होती है, क्योंकि उनके अपने बॉस या उनके पतियो के बॉस के फूहड़ और अश्लील मजाक सुनना और सहना पड़ता है। कभी-कभी तो उनका स्पर्श भी उन्हें मुस्कराते हुए झेलना पड़ता है।

रात को लगभग दो बजे पार्टी समाप्त हुई। प्रो० तार्किक और उमा ने कुमार और उर्वशी से विदाई ली और बंगले के बाहर निकल आये। बाहर उनका एकमात्र स्कूटर कारो के बीच फंसा था। अतः प्रतीक्षा के अतिरिक्त उनके पास चारा ही नही था। तार्किक जी ने नोट किया कि वहा की अधिकतर गाड़ियां सरकारी थीं। निस्सहाय सरकारी ड्राइवर अपने बॉसो का बेसब्री से इन्तजार कर रहे थे। कुछ ड्राइवरो को एक अति-